अहमदियों
की
हक़ीकत

क़ादियानियत
की
हक़ीक़त

मौलाना मुहम्मद अब्दुर्रऊफ़

Aadhar 3270052

क़ादियानियत की हक़ीक़त

लेखक
मौलाना मुहम्मद अब्दुर्रऊफ़

अनुवादक
एस० कौसर लईक़

साहित्य सौरभ
1781, हौज़ सुईवालान, नई दिल्ली-110002

विषय-सूची

भूमिका	3
परिचय	5
मिर्ज़ा साहब का संक्षिप्त जीवन-परिचय	7
नुबूवत का समापन और मिर्ज़ा गुलाम अहमद के अक़ीदे	14
इमाम मेहदी और हज़रत ईसा (अलै०) दो अलग-अलग शख़्सियतें	29
मिर्ज़ा गुलाम अहमद न मेहदी, न मसीह मौऊद	31
क़ुरआन व हदीस में फेर-बदल तथा इलहामात, तावीलें और दावे	34
मिर्ज़ा जी की भविष्यवाणियाँ	42
क़ादियानी लोग मुसलमानों को क्या समझते हैं ?	53
मिर्ज़ा साहब और बैतुल्लाह (काबा) का हज	57
मिर्ज़ा जी और अल्लाह की राह में जिहाद	58
अंतिम बात	61

नाम मूल किताब (उर्दू) : क़ादियानियत के ख़द्दो ख़ाल

संस्करण

पहली बार 2000 — 2100

मूल्य : 15.00

कम्पोज़िंग : नाज़ इन्टरप्राइज़ेज, दिल्ली-32

मुद्रक : भारत आफसेट, दिल्ली-6

'बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम'
(अल्लाह के नाम से जो बड़ा मेहरबान, निहायत रहीम है।)

भूमिका

देश-विभाजन को आधी सदी से अधिक समय गुज़र चुका है, किन्तु इसके नापसन्दीदा असरात अभी तक मौजूद हैं। पंजाब, हरियाणा, और हिमाचल प्रदेश के कुछ इलाक़ों में अब भी ऐसे लोग मौजूद हैं जो हालात से मजबूर होकर सत्य-धर्म (अर्थात् इस्लाम) से दूर हो गए थे। हालाँकि सुधार व प्रचार का काम देश-विभाजन के तुरंत बाद ही शुरू हो गया था, किन्तु सही बात यह है कि उसका हक़ अदा न हो सका। क़ादियानी, जो एक योजना के तहत अपने केन्द्र क़ादियान (पंजाब) में जमा व सुरक्षित रह गए थे, हालात अनुकूल पाकर अपना जाल बिछाने में लग गए और 'दीन' से नावाक़िफ़ बचे-खुचे लोगों को अपना शिकार बनाने लगे। उनकी सरगर्मियों का असल केन्द्र तो पाकिस्तान था, लेकिन वहाँ उन्हें बड़ी मुसीबतों और रुसवाइयों का सामना करना पड़ा, क्योंकि वहाँ का पूरा मुसलिम समुदाय अल्लाह के रसूल हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के बाद किसी भी व्यक्ति को अल्लाह का रसूल और नबी स्वीकार नहीं करता। अत: सन् 1974 ई० में सरकारी तौर पर उन्हें पाकिस्तान में ग़ैर मुसलिम ठहरा दिया गया, और आज पूरा मुसलिम-जगत् दीनी और धार्मिक रूप से उन्हें इस्लाम से बाहर समझता है। चूँकि पाकिस्तान में काम करना उनके लिए संभव न रहा, इसलिए उन्होंने अपनी कोशिशों और सरगर्मियों का रुख़ हिन्दुस्तान और ख़ास तौर से पंजाब की ओर फेर दिया। पूर्वीय पंजाब के भूले-भटके व कम इल्मवाले लोग जो उनकी असलियत से नावाक़िफ़ थे, उन्हें मुसलमान समझकर बहुत जल्द उनके झाँसे में आ गए। क़ादियानी लोग मुसलिम समाज के अन्दर घुसकर अपने आपको एक सच्चे मुसलमान के रूप में पेश करते हैं और अपने इरादों को छिपाए रखते हैं। उन्हें पहचान लेना हर एक के बस की बात नहीं।

यह किताब इसी मक़सद से लिखी गई है कि आम लोग क़ादियानियत का असली चेहरा देख सकें और उनके असल इरादों से जो बड़े डरावने और भयानक हैं, वाक़िफ़ हो सकें।

किताब लिखते समय मौलाना सैयद अबुल हसन नदवी (रह०), मौलाना

मुहम्मद यूसुफ़ लुधियानवी (रह०), मौलाना मुहम्मद अब्दुल ग़नी पटियालवी, मौलाना मुहम्मद अब्दुल्लाह मेमार अमृतसरी, प्रोफ़ेसर मुहम्मद इलियास बर्नी, अल्लामा एहसान इलाही ज़हीर शदीद (रह०), मौलाना मुहम्मद इदरीस काँधलवी (रह०), मौलाना सनाउल्लाह अमृतसरी (रह०) और मौलाना सैयद अबुल आला मौदूदी (रह०) के लेखों और कोशिशों से लाभ उठाया गया है और ज़्यादातर उद्धरण (हवाले) उन्हीं की पुस्तकों से लिए गए हैं। अल्लाह तआला इन बुज़ुर्गों की सभी कोशिशों और जिद्दोजुहद को क़बूल फ़रमाए और दुनिया व आख़िरत में उनके दर्जों को बुलंद करे। आमीन!

जनाब मौलाना मुहम्मद फ़ारूक़ साहब, डाक्टर ताबिश मेहदी, जनाब नसीम ग़ाज़ी साहब और भाई अज़ीज़ ख़ालिद किफ़ायत ने अपने क़ीमती मशविरों से नवाज़ा और हर मुमकिन सहयोग दिया, जिसके लिए इन लोगों का शुक्रिया अदा करना मैं अपना फ़र्ज़ समझता हूँ। इनके अलावा बहुत-से अन्य दोस्त भी हैं जो मुझे बराबर इसके लिए उत्साहित करते रहे, मैं उनका भी शुक्रिया अदा करता हूँ।

आख़िर में अल्लाह से दुआ है कि जिस जज़्बे और एहसास के साथ यह किताब तैयार की गई है, उसमें कामियाबी दे और मुसलिम उम्मत (समुदाय) को क़ादियानियत जैसे एक बड़े फ़ितने से महफ़ूज़ व सुरक्षित रखे।

"ऐ हमारे रब! हमारी ओर से इसे क़बूल कर ले, बेशक तू सुनता, जानता है।" —क़ुरआन, 2 : 127

आख़िरी नबी हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की शिफ़ाअत का उम्मीदवार—

—मुहम्मद अब्दुर्रऊफ़
इस्लामाबाद, मालेर कोटला
(पंजाब)

6 सितम्बर, 1999

परिचय

यह किताब मोहतरम मौलाना मुहम्मद अब्दुर्रऊफ़ की अध्ययन-रुचि और गवेषणात्मक चिंतन (तहक़ीक़ी फ़िक्र) और ज्ञान-प्रियता का प्रमाण तो है ही, किन्तु इससे भी बढ़कर यह ख़त्मे नुबूवत अर्थात् नुबूवत का समापन के अक़ीदे के संबंध में उनकी संलग्नता का प्रदर्शन भी है। इस रचना की ज्ञानात्मक (इल्मी) व तथ्यान्वेषणात्मक (तहक़ीक़ी) हैसियत चाहे कुछ भी हो, इसके ज्ञानात्मक लाभ से इनकार नहीं किया जा सकता क्योंकि आज हर व्यक्ति को ऐसे संसाधन उपलब्ध नहीं हैं कि इस सबसे बड़े फ़ितने से संबंधित साहित्य (Literature) का पूरी तरह अध्ययन कर सके। इस लिहाज़ से यह किताब एक कम्पैक्ट (Compact) की हैसियत रखती है जिसके आईने में क़ादियानियत की वास्तविक वस्तुस्थिति, उसके तमाम अवयवों के साथ देखी जा सकती है।

इस नश्वर संसार में सत्य और असत्य का संघर्ष आदिकाल से मौजूद रहा है और यह भी वास्तविकता है कि आख़िरकार असत्य को पराजय ही हाथ लगी है।

सतीज़ाकार रहा है अज़ल से ता इमरोज़।
चिराग़े मुस्तफ़ा से शरारे बूलहबी॥

(अर्थात् आदि से आज तक सत्य के प्रतीक हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा (सल्ल०) के चिराग़ और असत्य का साकार रूप अबू लहब की चिनगारी की जंग चली आ रही है।)

यही अबू लहब की चिनगारी विभिन्न ज़मानों में अलग-अलग अन्दाज़ से और अलग-अलग शक्लों में नूरे मुहम्मदी से संघर्षरत रही है। मगर ख़ुदा का शुक्र है कि हर बार ज़िल्लत व रुसवाई उसको प्राप्त हुई है और सत्य व न्याय को हमेशा जीत हासिल हुई है।

हिन्दुस्तान में क़ादियानियत के फ़ितने ने सिर उठाया तो हमारे पूर्वजों और दीन के बुज़ुर्गों व विद्वानों ने अपनी-अपनी प्रतिभा और हिम्मत व संसाधनों के मुताबिक़ उसको कुचलने और मिटाने की पूरी कोशिश की, और आज भी मुहम्मद (सल्ल०) के आशिक़ों व हक़ पर जान न्योछावर करनेवालों का क़ादियानियत से मुक़ाबला होता चला आ रहा है। वर्तमान समय में क़ादियानियत की तहरीक जिस ढंग से एक बार फिर अपने पाँव पसार रही है,

उसका पीछा करने के लिए भाई मोहतरम जनाब मुहम्मद अब्दुर्रऊफ़ साहब ने रात-दिन मेहनत करके क़ादियानी किताबों और पत्रिकाओं से ही लेखांशों (इक़तिबासों) को नक़ल करके उसका असली चेहरा दिखाने की कोशिश की है। ख़ुदा उनकी इस कोशिश को क़बूल करे और जिस मक़सद के लिए यह किताब पेश की जा रही है उसमें कामियाबी दे। (आमीन !)

—ख़ालिद किफ़ायत
इस्मत मंज़िल, मालेर कोटला
(पंजाब)

मिर्ज़ा साहब का संक्षिप्त जीवन-परिचय

जन्म तथा वंश

मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी का जन्म सन् 1839 ई० या सन् 1840 ई० में ज़िला गुरुदासपुर (पंजाब) के क़स्बा क़ादियान में हुआ। (सन् 1891 ई० में मसीह मौऊद होने का और सन् 1901 ई० में नुबूवत का दावा किया। सन् 1908 ई० में लाहौर में मृत्यु हुई और क़ादियान में दफ़न हुए।) उनके वालिद का नाम ग़ुलाम मुर्तज़ा और वालिदा का नाम चिराग़ बीबी था। उनका संबंध मुग़ल क़ौम बिरलास से था।

शिक्षा (तालीम)

मिर्ज़ा साहब की इबतिदाई तालीम घर पर हुई। उन्होंने क़ुरआन मजीद और थोड़ी-सी फ़ारसी की तालीम अपने घर पर ही मौलवी फ़ज़्ले इलाही से हासिल की और अपनी सियालकोट की नौकरी के दौरान वहाँ आफ़िस के मुंशियों से कुछ अंग्रेज़ी भी सीखी। (सीरतुल मेहदी, भाग-1, पृ० 137) मिर्ज़ा ने मिसमेरिज़्म (MESMERISM) की तालीम भी हासिल की और उसमें महारत हासिल करने की कोशिश की, किन्तु बाद में उसको छोड़ दिया।

जवानी की बात

"बयान किया मुझसे हज़रत वालिदा साहिबा ने कि एक बार अपनी जवानी के ज़माने में हज़रत मसीह मौऊद अलै० तुम्हारे दादा की पेंशन वसूल करने गए तो पीछे-पीछे मिर्ज़ा इमामुद्दीन भी चले गए। जब आपने पेंशन वसूल कर ली तो वह आपको फुसलाकर और धोखा देकर बजाए क़ादियान लाने के बाहर ले गया और इधर-उधर फिराता रहा। फिर जब आपने रुपया उड़ाकर ख़त्म कर दिया तो आपको छोड़कर कहीं और चला गया। हज़रत मसीह मौऊद इस शर्म से वापस घर नहीं आए और चूँकि तुम्हारे दादा का मंशा रहता था कि आप कहीं मुलाज़िम हो जाएँ, इसलिए आप सियालकोट शहर में डिप्टी कमिशनर की कचेहरी में थोड़ी-सी तनख़्वाह पर मुलाज़िम हो गए।"

—सीरतुल मेहदी, भाग-1, पृ० 24, अंक-54, लेखक : साहबज़ादा बशीर अहमद

लिबास

मिर्ज़ा साहब आम तौर पर गर्म कपडे पहनते थे जिसमें ओवरकोट शामिल था। गर्मियों में भी पायजामा और सदरी (सीनाबंद जाकेट) गर्म रखते थे। सिर पर अमामा (पगड़ी) बाँधते थे और यह सब कुछ बीमारी की वजह से था।

पसंदीदा ख़ुराक

उनको मिठाई और मीठे खाने बहुत पसंद थे।

जेब के ढेले

हालाँकि शुगर की बीमारी भी आपको लगी हुई थी और बार-बार पेशाब (Garrility) के भी आप रोगी थे, उसी ज़माने में आप मिट्‌टी के ढेले कभी-कभी जेब में ही रखते थे और उसी जेब में गुड़ के ढेले भी रख लिया करते थे। इसी प्रकार की और बहुत-सी बातें हैं जो इस बात की गवाह हैं कि आपको अपने शाश्वत यार के प्यार में ऐसी तल्लीनता थी कि जिसके सबब इस दुनिया से बिलकुल बेख़बर हो रहे थे।

—मिर्ज़ा साहब के हालात, संकलनकर्ता : मेराजुद्दीन उमर साहब, परिशिष्ट बराहीने अहमदिया, भाग-1, पृ० 67

जिस्मानी हालत

बचपन में चोट लग जाने के सबब से आपका दाहिना हाथ कमज़ोर था। आप निवाला मुँह तक तो ले जाते थे, लेकिन पानी का बरतन मुँह तक न ले जा सकते थे। नमाज़ में भी आपको दाहिना हाथ बाएँ हाथ से सँभालना पड़ता था।

—हयातुल मेहदी, पृ० 198

मिर्ज़ा साहब की आँखें

मिर्ज़ा साहब की आँखें अध-खुली रहती थीं और एक आँख दूसरी के मुक़ाबले में छोटी थी। एक बार मिर्ज़ा साहब अपने कुछ ख़ादिमों के साथ फ़ोटो खिंचवाने गए तो फ़ोटोग्राफ़र ने आपसे अर्ज़ किया कि हुज़ूर ज़रा आँखें खोलकर रखें, वरना तसवीर अच्छी नहीं आएगी और आपने उसके कहने पर एक बार तकलीफ़ के साथ आँखों को कुछ अधिक खोला भी किन्तु वे फिर उसी तरह आधी बंद हो गईं।

—सीरतुल मेहदी, पृ० 77, भाग-2, रिवायत 403-404, लेखक : साहबज़ादा बशीर अहमद

स्नायविक (आसाबी) दुर्बलता

मिर्ज़ा साहब स्नायविक कमज़ोरी के सिलसिले में ख़ुद भी लिखते हैं जो इस प्रकार है—

"मेरे मोहतरम भाई (मौलवी नूरुद्दीन साहब) अस्सलामु अलैकुम

यह आजिज़ पीर (सोमवार) के दिन 9 मार्च, सन् 1891 ई० को अपने परिवार के साथ लुधियाना की ओर जाएगा और चूँकि सर्दी और दूसरे-तीसरे दिन बारिश भी हो जाती है और इस आजिज़ को स्नायविक (आसाबी) बीमारी है, ठंडी हवा और बारिश से बहुत नुक़सान पहुँचता है। इस कारण से यह आजिज़ किसी सूरत से इतनी तकलीफ़ उठा नहीं सकता कि इस हालत में लुधियाना पहुँचकर फिर जल्दी लाहौर में आवे। तबीअत बीमार है, लाचार हूँ। इसलिए मुनासिब है कि अप्रैल के महीने में कोई तारीख़ तय की जाए। अस्सलाम

विनीत गुलाम अहमद

—मक्तूबाते अहमदिया, भाग-5, अंक-2, पृ० 90, लेख : याक़ूब अली उर्फ़ानी क़ादियानी

याददाश्त की ख़राबी

मिर्ज़ा साहब फ़रमाते हैं—

"मेरी याददाश्त बहुत ख़राब है, अगर कई बार किसी से मुलाक़ात हो तब भी भूल जाता हूँ। याद दिलाना सबसे अच्छा तरीक़ा है। याददाश्त इतनी ख़राब है कि बयान नहीं कर सकता।" —मक्तूबाते अहमदिया, भाग-5, पृ० 21, अंक 2

मिर्ज़ा साहब के दाँत

मिर्ज़ा साहब के दाँत आख़िरी उम्र में बहुत ख़राब हो गए थे, यानी कुछ दाँतों को कीड़ा लग गया था जिससे कभी-कभी बहुत तकलीफ़ हो जाती थी। चुनाँचे एक बार एक दाढ़ का सिरा ऐसा नोकदार हो गया था कि उससे उनके ज़बान में ज़ख़्म पड़ गया तो रेती के साथ घिसवाकर बराबर भी कराया था, मगर कभी कोई दाँत निकलवाया नहीं।

—सीरतुल मेहदी, भाग-2, पृ० 135

जूते का तोहफ़ा

एक बार एक व्यक्ति ने जूते तोहफ़े में पेश किए। मिर्ज़ा साहब ने उसे

क़बूल कर पहन लिया, किन्तु उसके दाएँ-बाएँ की पहचान न कर सकते थे। दायाँ पैर बाईं ओर के जूते में और बायाँ पैर दाईं ओर के जूते में डालकर पहन लिया। आख़िरकार इस ग़लती से बचने के लिए एक ओर के जूते पर सियाही से निशान लगाना पड़ा। —सीरतुल मेहदी, भाग-1, पृ० 67

बार-बार पेशाब आने की बीमारी

मिर्ज़ा साहब ख़ुद ज़िक्र करते हैं—

"मुझे किसी दिन कभी-कभी सौ बार से भी अधिक पेशाब आता है, जिससे कमज़ोरी बढ़ जाती है।" —सीरतुल मेहदी, भाग-2

फिर तो मिर्ज़ा साहब बेचारे पेशाब ही में लगे रहते होंगे। हर पन्द्रह मिनट बाद पेशाब, फिर पेशाब में 5-6 मिनट भी लगते होंगे।

स्थाई रोग

"मैं एक स्थाई मर्ज़ से ग्रस्त आदमी हूँ। हमेशा सिर के दर्द, सिर चकराने, अनिद्रा (नींद न आना) और दिल की ऐंठन की बीमारी दौरे के साथ आती है। वह बीमारी मधुमेह (शूगर) है कि एक मुद्दत से लगी है और कभी-भी सौ-सौ बार रात को या दिन को पेशाब आता है। इस बार-बार पेशाब आने से जितनी बीमारियों की कमज़ोरी होती है वे सब मेरी हालत में शामिल हैं।"

—ज़मीमा अरबईन, पृ० 403, रूहानी ख़ज़ाइन, पृ० 471, भाग-17

अफ़ीम

मिर्ज़ा साहब कहते हैं—

"एक बार मुझे एक दोस्त ने सलाह दी कि मधुमेह के लिए अफ़ीम लाभदायक होती है। अत: इलाज के मक़सद से, हरज नहीं कि अफ़ीम शुरू कर दी जाए। मैंने जवाब दिया कि यह आपने बड़ी मेहरबानी की कि हमदर्दी दिखाई।" —नसीमे दावत, पृ० 67

मियाँ महमूद ख़लीफ़-ए-क़ादियान लिखते हैं कि हज़रत मसीह मौऊद (अलै०) ने "तिर्याक़े इलाही" दवा अल्लाह तआला की हिदायत व मार्गदर्शन के तहत बनाई और उसका एक बड़ा हिस्सा अफ़ीम थी और यह दवा किसी क़द्र और अफ़ीम की अधिकता के बाद हज़रत ख़लीफ़ा प्रथम (हकीम नूरुद्दीन साहब) को (हुज़ूर मिर्ज़ा साहब) छ: माह से अधिक दिनों तक देते रहे और ख़ुद भी

समय-समय पर अनेकों बीमारियों के दौरों के वक़्त इस्तेमाल करते रहे।

—अख़बार अल-फ़ज़्ल, भाग-17, अंक-6, पृ० 2, तारीख़ 19 जुलाई, सन् 1929 ई०

ब्राण्डी

ब्राण्डी, जो मशहूर शराब है, मिर्ज़ा साहब अपने दोस्तों के लिए मँगवाकर देते थे। एक बार अपने ख़ास सेवक मेहदी हसन से कहा—

"दो बोतल ब्राण्डी पीर मंज़ूर मुहम्मद के लिए लेते आना। जब तक तुम बोलतें ब्राण्डी की न ले लो लाहौर से रवाना न होना।"

मैं समझ गया कि अब मेरे लिए लाना ज़रूरी है। मैंने प्ल्यूमर की दुकान से दो बोतलें ख़रीदकर ला दीं। (सेवक का उत्तर)

—अख़बार अल-हकम क़ादियान, भाग-39, अंक-25, तारीख़ 7 नवम्बर, सन् 1936 ई०

टॉंक वाइन

टॉंक वाइन, जो बहुत ही उम्दा और उत्तम विदेशी शराब है, मिर्ज़ा साहब ने अपने खाने के सामानों के साथ मियाँ यार महमूद साहब के ज़रीए लाहौर से मँगवाई।

—अख़बार अल-हकम, क़ादियान, भाग-39, अंक-25, तारीख़ 7 नवम्बर, सन् 1936 ई०

ख़ुतूत बनामे ग़ुलाम, पृ० 5, संग्रह : मक्तूबात मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी साहब, बनामे हकीम मुहम्मद हुसैन कुरैशी साहब क़ादियानी. . . . रफ़ीक़ुस्सेहत, लाहौर।

टॉंक वाइन का फ़तवा

अत: इन हालात में अगर मसीह मौऊद ब्राण्डी और रम (Rum)[1] का इस्तेमाल भी अपने मरीज़ों से करवाते या ख़ुद भी मर्ज़ की हालत में कर लेते हों तो वह शरीअत के ख़िलाफ़ न था। जबकि "टॉंक वाइन" एक दवा है। अगर अपने ख़ानदान के किसी सदस्य या दोस्त के लिए जो किसी लम्बे मर्ज़ से उठा हो और कमज़ोर हो गया या मान लिया जाए कि अपने लिए भी मँगवाई हो और

1. गुड़ की शराब।

इस्तेमाल भी की हो तो इसमें क्या हरज हो गया। आपको कमज़ोरी के दौरे इतने सख़्त पड़ते थे कि हाथ-पाँव ठंडे पड़ जाते थे। नाड़ियाँ डूब जाती थीं। मैंने ख़ुद ऐसी हालत में आपको देखा है। नाड़ी (नब्ज़) का पता नहीं चलता था, तो वैद्यों या डॉक्टरों के मशविरे से आपने "टॉंक वाइन" का इस्तेमाल ऐसी सूरत में किया हो तो बिलकुल शरीअत के मुताबिक़ है।

—डॉक्टर बशारत अहमद क़ादियानी, फ़रीक़ लाहौरी, प्रकाशित : अख़बारे पैग़ामे सुलह, भाग-23, पृ० 15, तारीख़ 4 मार्च, सन् 1935 ई०

पढ़नेवाले लोग ऊपर लिखी इबारतों को ज़ेहन में रखें और ग़ौर करें कि शराब के बारे में क़ादियानियों का नज़रिया कहाँ तक सही है और यह कहाँ तक इस्लाम के अहकाम के मुताबिक़ है।

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया—"हर नशा लानेवाली चीज़ ख़म्र (शराब) है और हर ख़म्र (शराब) हराम है।" —मुसलिम

अल्लाह के आख़िरी नबी हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया—"शराब दवा नहीं, बीमारी है।" अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने शराब के सिलसिले में 10 आदमियों पर लानत भेजी है : (1) शराब निचोड़नेवाला (2) निचुड़वानेवाला (3) पीनेवाला (4) उठानेवाला (5) वह जिसके लिए उठाकर ले जाई जाए (6) पिलानेवाला (7) बेचनेवाला (8) उसकी क़ीमत खानेवाला (9) ख़रीदनेवाला (10) और जिसके लिए ख़रीदी जाए।

नुबूवत और सुचरित्र

अल्लाह तआला ने अपने आख़िरी नबी हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) को जो रूप और चरित्र प्रदान किया था, कितने ही लोग जनाब नबी करीम (सल्ल०) के नूरानी रूप को देखकर आप (सल्ल०) की नुबूवत पर ईमान ले आए और कितने ही लोग आप (सल्ल०) के चरित्र और अच्छे सुलूक से प्रभावित होकर ईमान ले आए और कितने ही लोगों के लिए आप (सल्ल०) का कलाम (वाणी) ईमान लाने का सबब बन गया।

ख़ुशक़िस्मत बेटे का जनाज़ा

मिर्ज़ा अफ़ज़ल अहमद साहब, मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी के बहुत ही नेक बेटे थे। मिर्ज़ा साहब अपने इस बेटे के फ़रमाँबरदार और ख़िदमतगुज़ार होने को तसलीम करते हैं, लेकिन उन्होंने अपने बेटे की नमाज़े जनाज़ा इसलिए नहीं

पढ़ी कि वह अपने बाप मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी की नुबूवत का इनकारी था और आख़िरी वक़्त तक सरवरे कायनात रहमतुललिल आलमीन हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की नुबूवत से जुड़ा रहा।

इससे बढ़कर और क्या संगदिली हो सकती है। क्या कोई ऐसा पत्थर-दिल व ज़ालिम इनसान नबी हो सकता है?

खुला हुआ ज़ुल्म

मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी ने अपने बड़े बेटे सुलतान अहमद को उसके सारें अधिकारों से सिर्फ़ इसलिए महरूम कर दिया कि उसने मुहम्मदी बेग से मिर्ज़ा साहब का रिश्ता कराने में उनकी मदद नहीं की, बल्कि उनके विरोधियों का साथ दिया और अपने दूसरे बेटे मिर्ज़ा फ़ज़्ल अहमद साहब की बीवी को इस अपराध पर तलाक़ दिलवाया कि उनकी बीवी मिर्ज़ा अहमद बेग मुहम्मदी बेगम के वालिद की भांजी थी। इस्लामी शरीअत में तलाक़ हलाल कामों में सबसे बुरा काम है। क्या इस बुरा काम तलाक़ दिलवाने का अपराध करनेवाला (और इसपर यह कि वह बदले की भावना से हो) नबी हो सकता है?

नुबूवत का समापन और मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद के अक़ीदे

मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी शुरू में ख़त्मे नुबूवत (नुबवूत के समापन) के उसी तरह क़ायल थे जिस तरह आम मुसलमान क़ायल हैं तथा ख़त्मे नुबूवत के वही मतलब लेते थे जिसपर पूरी उम्मत एकमत है कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) पर नुबूवत का सिलसिला ख़त्म हो गया। अब आप (सल्ल०) के बाद कोई नबी आनेवाला नहीं है। अर्थात् आप (सल्ल०) ने नुबूवत के दरवाज़े को हमेशा के लिए बन्द कर दिया। अतः मिर्ज़ा साहब लिखते हैं—

"क़ुरआन करीम ख़ातिमुन्नबीईन (अर्थात् नबियों के समापक) के बाद किसी रसूल का आना जाइज़ नहीं रखता, चाहे वह नया रसूल हो या पुराना हो, क्योंकि रसूल को इल्म जिबरील (अलै०) के ज़रिए से मिलता है और रिसालत की वह्य लेकर जिबरईल (अलै०) के नाज़िल होने का दरवाज़ा बन्द है और यह बात ख़ुद रोक है कि रसूल तो आए, किन्तु रिसालत की वह्य का सिलसिला न हो।"

—इज़ाला औहाम, पृ० 761, रूहानी ख़जाइन, पृ० 511, भाग-3, मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी मतबूआ, सन् 1891 ई०

"हर समझदार व्यक्ति समझ सकता है कि अगर अल्लाह तआला अपने वादे का सच्चा है, और जो वादा क़ुरआन की आयत 'ख़ातिमुन्नबीईन' में किया गया है और जो हदीसों में तफ़सील से बयान किया गया है कि जिबरील (अलै०) को रसूल (सल्ल०) की वफ़ात के बाद हमेशा के लिए नुबूवत की वह्य लाने से मना किया गया है—ये सारी बातें सच और सही हैं—तो फिर कोई व्यक्ति रसूल की हैसियत से हमारे नबी (सल्ल०) के बाद हरगिज़ नहीं आ सकता।"

—इज़ाला औहाम, पृ० 577, रूहानी ख़ज़ाइन, पृ० 412, भाग-3, लेखक : मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी, सन् 1891 ई०

"क्या तू नहीं जानता कि परवरदिगार, रहीम, फ़ज़्लवाले ने हमारे नबी (सल्ल०) का बिना किसी अपवाद के ख़ातिमुन्नबीईन (अर्थात् नुबूवत के समापक) नाम रखा और हमारे नबी (सल्ल०) ने चाहनेवालों के लिए इसी की व्याख्या अपने कथन—ला नबी-य-बअदी (अर्थात् मेरे बाद कोई नबी नहीं) में साफ़ तौर से कर दी और अगर हम अपने नबी (सल्ल०) के बाद किसी नबी का आना सही

मानें तो मानो कि हम वह्य का दरवाज़ा बन्द हो जाने के बाद उसका खुलना जाइज़ ठहरा दें और यह सही नहीं है। जैसा कि मुसलमानों पर स्पष्ट है और हमारे नबी (सल्ल०) के बाद नबी कैसे आ सकता है, जबकि आप (सल्ल०) की वफ़ात के बाद वह्य का सिलसिला ख़त्म हो गया और अल्लाह तआला ने आप (सल्ल०) पर नबियों (के सिलसिले) को ख़त्म कर दिया।"

—हमामतुल बुशरा, पृ० 24; रूहानी ख़ज़ाइन, पृ० 200, मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी मतबूआ, सन् 1894 ई०

"हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने बार-बार फ़रमाया था कि मेरे बाद कोई नबी नहीं आएगा और हदीस 'ला नबी-य-बअदी' ऐसी मशहूर थी कि किसी को इसके सही होने में शुबह नहीं था और क़ुरआन शरीफ़ जिसका शब्द, निर्णायक शब्द है पाक आयत 'व लाकिर्रसूलल्लाहि व ख़ातमन्नबिय्यीन' (अर्थात् लेकिन अल्लाह का रसूल और नबियों के समापक हैं) से भी साबित होता है कि वास्तव में हमारे नबी (सल्ल०) पर नुबूवत ख़त्म हो चुकी है।"

—किताबुल बरिया, पृ० 184, रूहानी ख़ज़ाइन, पृ० 217-18, भाग-13, मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी, मतबूआ, सन् 1897 ई०

नुबूवत के ख़त्म होने का इनकारी—काफ़िर और झूठा

मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी उस व्यक्ति के क़ाफ़िर (इनकार करनेवाला) व झूठा मानते हैं जो नुबूवत के ख़त्म होने का क़ायल नहीं है। इस सिलसिले में हम उनके ये कथन नक़ल करते हैं—

"मैं उन सभी बातों का क़ायल हूँ जो इस्लामी अक़ीदों में दाख़िल हैं और जैसा कि 'अहले सुन्नत वल-जमाअत' का अक़ीदा है। उन सब बातों को मानता हूँ जो क़ुरआन व हदीस से पूरी तरह साबित हैं और सैयदना व मौलाना हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) व रसूलों के समापक (सल्ल०) के बाद किसी दूसरे नुबूवत व रिसालत के दावेदार को झूठा व काफ़िर जानता हूँ। मेरा यक़ीन है कि रिसालत की वह्य हज़रत आदम सफ़ीउल्लाह से शुरू हुई और जनाब मुहम्मद रसूल (सल्ल०) पर ख़त्म हो गई।"

—मजमूआ इश्तेहरात, पृ० 230, भाग-1, 12 अक्तूबर, सन् 1891 ई०, लेखक: मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी

"उन तमाम बातों में मेरा वही मज़हब है जो दूसरे 'अहले सुन्नत वल-जमाअत' का मज़हब है। अब मैं तफ़सील से नीचे लिखी बातों को

मुसलमानों के सामने इस ख़ुदा के घर (जामा मसजिद, दिल्ली) में साफ़-साफ़ तसलीम करता हूँ कि मैं जनाब ख़ातमुल अंबिया सल्ल० (नबियों के क्रम-समापक अर्थात् हज़रत मुहम्मद सल्ल०) की ख़त्मे नुबूवत का क़ायल हूँ और जो व्यक्ति नुबूवत के ख़त्म होने का इनकारी हो उसको बेदीन (विधर्मी) और इस्लाम के दायरे से ख़ारिज समझा हूँ।"

—मिर्ज़ा गुलाम अहमद क़ादियानी का तहरीरी बयान जो तारीख़ 23 अक्तूबर, सन् 1891 ई० को जामा मसजिद, दिल्ली के जलसे में दिया गया।

—मजमूआ इश्तेहरात, पृ० 255, अंकित तबलीग़े रिसालत, भाग-2, पृ० 44

"क्या ऐसा बदक़िस्मत झूठा जो ख़ुद रिसालत का दावा करता है क़ुरआन शरीफ़ पर ईमान रख सकता है और क्या ऐसा वह व्यक्ति जो क़ुरआन शरीफ़ पर ईमान रखता है और आयत 'व लाकिर्रसूलल्लाहि व ख़ातमन्नबिय्यीन' (अर्थात् अल्लाह के रसूल और नबियों के क्रम-समापक हैं) को ख़ुदा का कलाम यक़ीन करता है, वह कह सकता है कि में भी आप (सल्ल०) के बाद रसूल और नबी हूँ?"

—अंजामे आतिहम, पृ० 27, रूहानी ख़ज़ाइन, हाशिया नं० 27, भाग-11, प्रकाशित सन् 1894 ई०

"मैं जानता हूँ कि हर वह चीज़ जो क़ुरआन के मुख़ालिफ़ है वह झूठ, नास्तिकता व बेदीनी है। फिर मैं किस प्रकार नुबूवत का दावा करूँ, जबकि मैं मुसलमानों में से हूँ।"

—हमामतुल बुशरा, पृ० 96, रूहानी ख़ज़ाइन, पृ० 297, भाग-7, लेखक : मिर्ज़ा गुलाम अहमद क़ादियानी, प्रकाशित सन् 1894 ई०

"मैं न नुबूवत का दावेदार हूँ और न मोजज़ात (नबियोंवाला चमत्कार दिखानेवाला कर्म) और फ़िरिश्तों, लैलतुल क़द्र आदि से इनकार करनेवाला, और सैयदना मौलाना हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ख़ातमुल मुर्सलीन के बाद किसी दूसरे नुबूवत और रिसालत के दावेदार को झूठा और काफ़िर जानता हूँ।"

—तबलीग़े रिसालत, भाग-2, पृ० 22, मजमूआ इश्तेहरात, पृ० 230, तारीख़ 22 अक्तूबर, सन् 1891 ई०

"मुझे कब जाइज़ है कि मैं नुबूवत का दावा करके इस्लाम से ख़ारिज हो जाऊँ और काफ़िरों की जमाअत से जा मिलूँ।"

—हमामतुल बुशरा, पृ० 96, प्रकाशित सन् 1894 ई०

"ऐ लोगो! क़ुरआन के दुश्मन न बनो और ख़ातमुन्नबीयीन के बाद नुबूवत की वह्य का नया सिलसिला जारी न करो। उस ख़ुदा से शर्म करो जिसके सामने हाज़िर किए जाओगे।" —आसमानी फ़ैसला, पृ० 25, प्रकाशित सन् 1891 ई०

मुजद्दिद व वली होने की तरफ़ पेशक़दमी

उपरोक्त हवालों से मिर्ज़ा गुलाम अहमद ने स्पष्ट और खुले शब्दों में नबी करीम (सल्ल०) को ख़ातमुल अम्बिया यानी हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) को आख़िरी नबी तसलीम करते हुए उस व्यक्ति को झूठा और ख़ुदा का विरोधी बताया है जो नबी करीम हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के बाद किसी को नबी या रसूल मानता है, और वह बार-बार इस बात को दुहराते हैं कि "मेरा अक़ीदा वही है जो सारे मुसलमानों का अक़ीदा है कि अब अल्लाह के आख़िरी नबी हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के बाद कोई नबी और रसूल नहीं आएगा। इसके विरुद्ध आप (सल्ल०) के बाद मैं किसी को नबी और रसूल मानकर कैसे इस्लाम से ख़ारिज हो सकता हूँ?" इस खुले इक़रार के बाद ग़ौर कीजिए कि मिर्ज़ा साहब किस प्रकार नुबूवत के अक़ीदे से दूर होते चले गए। आख़िरकार उन्होंने एक "ज़िल्ली नबी"[1], फिर स्थायी नबी व रसूल[2] होने का दावा कर दिया, बल्कि आख़िर में अपने आपको तमाम नबियों से बड़ा साबित करने की नाकाम कोशिश की। चुनाँचे मिर्ज़ा साहब एक जगह लिखते हैं—

"उनपर स्पष्ट रहे कि हम भी नुबूवत के दावेदार पर लानत भेजते हैं और 'ला इला-ह इल्लल्लाह और मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह' के क़ायल हैं और आप (सल्ल०) पर नुबूवत ख़त्म होने पर ईमान लाते हैं और नुबूवत की वह्य (वह्य-नुबूवत) नहीं बल्कि वली होने की वह्य (वह्य-विलायत) जो हज़रत मुहमद (सल्ल०) की नुबूवत के अधीन और आप (सल्ल०) की पैरवी व पद्चिह्नों पर चलने से अल्लाह के वलियों को मिली है, इसके हम क़ायल हैं और इससे ज़्यादा जो व्यक्ति मुझपर इलज़ाम लगाए वह तक़वा और ईमानदारी को छोड़ता है। अतः नुबूवत का दावा नहीं, बल्कि सिर्फ़ विलायत (वली होने) और मुजद्दिद होने का दावा है।

—इश्तेहार मिर्ज़ा, तारीख़ 20 शाबान, सन् 1314 हिजरी, तबलीग़ रिसालत, भाग-6, पृ० 372, मजमूआ इश्तेहरात, पृ० 297 से 298, भाग-2

1. वह नबी जो ख़ुद शरीअतवाला न हो यानी जिसे अल्लाह की ओर से शरीअत (संविधान) न दी गई हो, बल्कि वह किसी दूसरे नबी की शरीअत का अनुपालक हो। —अनुवादक
2. यानी वास्तविक नबी, जैसे दूसरे नबी थे।

"और ख़ुदा कलाम व ख़िताब करता है उस उम्मत के वलियों के साथ और उनको नबियों का रंग दिया जाता है, लेकिन वे हक़ीक़त में नबी नहीं होते, क्योंकि क़ुरआन करीम ने शरीअत की तमाम ज़रूरतों को पूरा कर दिया है।"

—मवाहिबुर्रहमान, पृ० 66, सन् 1903 ई०

"मेरा नुबूवत का कोई दावा नहीं, यह आपकी ग़लती है या आप किसी ख़याल से कह रहे हैं। क्या यह ज़रूरी है कि जो इलहाम (ईश-प्रेरणा) का दावा करता है वह नबी भी हो जाए। मैं तो मुहम्मदी और पूरे तौर पर अल्लाह और रसूल का पैरोकार हूँ और इन निशानियों का नाम मोजज़ा[1] रखना नहीं चाहता, बल्कि हमारे मज़हब के अनुसार इन निशानियों का नाम करामात है जो अल्लाह और रसूल की पैरवी से दिए जाते हैं।" —जंगे मुक़द्दस, पृ० 67, प्रकाशित सन् 1893 ई०

"पहले तो इस आज़िज (विनीत) की बात को याद रखें कि हम लोग मोजज़ा का शब्द उसी अवसर पर बोला करते हैं जो कोई ग़ैर-मामूली चमत्कार किसी नबी या रसूल की तरफ़ मंसूब हो। लेकिन यह आजिज़ न नबी है न रसूल है, केवल मासूम नबी मुहम्मद (सल्ल०) का एक मामूली सेवक और अनुयायी है और प्यारे नबी (सल्ल०) की बरकत और आज्ञानुपालन से ये रौशनियाँ और बरकतें ज़ाहिर हो रही हैं, इसलिए इस जगह करामत का शब्द मुनासिब है, न कि मोजज़े का।"

—अख़बार अलहकम, क़ादियान, पृ० 23, भाग-5, प्रतिलिखित द्वारा : क़मरुल हुदा, पृ० 58, ले० : क़मरुद्दीन जुहलमी क़ादियानी

"इनसाफ़ चाहनेवाले को याद रखना चाहिए कि इस आजिज़ ने कभी और किसी वक़्त हक़ीक़त में नुबूवत या रिसालत का दावा नहीं किया और अवास्तविक रूप में किसी शब्द का प्रयोग करना और शब्दकोश के सामान्य अर्थों के लिहाज़ से उसी को बोलचाल में लाना कुफ़्र को लाज़िम नही करता है, मगर मैं इसको भी पसन्द नहीं करता कि इसमें आम मुसलमानों को धोखा लग जाने का अन्देशा है।" —अंजाम आथम, पृ० 27, प्रकाशित सन् 1896 ई०

"यह सच है कि वह इलहाम (ईश-प्रेरणा) जो अल्लाह ने इस बन्दे पर उतारा है, उसमें इस बन्दे के बारे में 'नबी' और 'रसूल' 'मुर्सल' के शब्द अधिकता से

1. मोजज़ा और करामत, समनार्थी शब्द हैं। और इन दोनों का अर्थ 'चमत्कार' है। किन्तु इस्लामी पारिभाषिक शब्दावली में 'मोजज़ा' उस चमत्कार को कहते हैं जो अल्लाह के नबी व पैग़म्बरों के द्वारा प्रदर्शित किया जाता है और 'करामत' उस चमत्कार को कहते हैं जो वली व बुज़ुर्गों द्वारा प्रकट होता है। —अनुवादक

मौजूद हैं। इसलिए यह वास्तविक अर्थों पर आधारित नहीं है—व लाकिन अय्यस्तलह—सो ख़ुदा की यह इस्तिलाह (पारिभाषा) है जो उसने ऐसे शब्द प्रयोग किए। हम इस बात के क़ायल और माननेवाले हैं कि नुबूवत के वास्तविक अर्थों के अनुसार हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के बाद न कोई नया नबी आ सकता है और न पुराना। क़ुरआन ऐसे नबियों के प्रकट होने से मना करता है, किन्तु मजाज़ी (लाक्षणिक) अर्थों की मदद से अल्लाह को यह सामर्थ्य प्राप्त है कि किसी मुलहम[1] को नबी के शब्दों से या रसूल के शब्दों से याद करे।"

—सीराजे मुनीर, पृ० 302, प्रकाशित सन् 1897 ई०

"हाल यह है कि हालाँकि बीस साल से लगातार इस आजिज़ को इलहाम हुआ है। अधिकतर उसमें नबी या रसूल का शब्द आ गया है लेकिन वह व्यक्ति ग़लत कहता है जो ऐसा समझता है। इस नुबूवत व रिसालत से मुराद हक़ीक़ी नुबूवत और रिसालत है। चूँकि ऐसे शब्दों से जो व्यक्ति इस्तिआरा (रूपक) के रंग में हैं इस्लाम में फ़ितना पड़ता है और इसका नतीजा अत्यंत बुरा निकलता है। इसलिए जमाअत की आम बोल-चाल और दिन-रात के मुहावरों में ये शब्द नहीं आने चाहिएँ।"

—मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी का ख़त, अंकित अख़बार 'अलहकम' क़ादियान नं० 29, भाग-3, तारीख़ 17 अगस्त, सन् 1899 ई० प्रतिलिपित रिसाला मसीह मौऊद और ख़त्मे नुबूवत, पृ० 6, मौलवी मुहम्मद अली लाहौरी।

हदीस की विद्वता (मुहद्दिसियत) से नुबूवत की ओर तरक़्क़ी

"हमारे सरदार व रसूल (सल्ल०) नबियों के सिलसिले के समापक हैं और आप (सल्ल०) के बाद कोई नबी नहीं आ सकता। इसलिए इस शरीअत में नबी के स्थानापन्न मुहद्दिस (हदीस के विद्वान) मुक़र्रर किए गए हैं।"

—शहादतुल क़ुरआन, पृ० 28, प्रकाशित सन् 1893 ई०

"मैं नबी नहीं हूँ बल्कि अल्लाह की ओर से हदीस के विद्वान (मुहद्दिस) और अल्लाह का कलीम (बात करनेवाला) हूँ ताकि (मुहम्मद) मुस्तफ़ा (सल्ल०) के दीन की तजदीद करूँ।"

—आईन-ए-कमालात, पृ० 383, प्रकाशित सन् 1893 ई०

1. जिसपर इलहाम यानी ईश-प्रेरणा होती हो।

"मैंने हरगिज़ नुबूवत का दावा नहीं किया और न मैंने कहा है कि मैं नबी हूँ, लेकिन उन लोगों ने जल्दी की और मेरी बात को समझने में ग़लती की है। लोगों ने सिवाए उसके जो मैंने अपनी किताबों में लिखा है और कुछ नहीं कहा कि मैं मुहद्दिस (हदीस का विद्वान) हूँ और अल्लाह तआला मुझसे इस तरह कलाम (बातचीत) करता है, जिस तरह मुहद्दिसीन (हदीस के विद्वानों) से।"

—हमामतुल बुशरा, पृ० 96, प्रकाशित सन् 1894 ई०

"लोगों ने मेरी बात को नहीं समझा है और कह दिया है कि यह व्यक्ति नुबूवत का दावेदार है और अल्लाह जानता है कि उनका कथन (क़ौल) पूरी तरह झूठ है जिसमें सच्चाई बिलकुल नहीं और न इसकी बुनियाद है। हाँ, मैंने यह ज़रूर कहा है कि 'मुहद्दिस' में नुबूवत के सभी गुण पाए जाते हैं, लेकिन बिलक़ुव्वत (सामर्थ्यानुसार), बिलफ़ेल (कर्मानुसार) नहीं, तो मुहद्दिस सामर्थ्यवान नबी है। और नुबूवत का दरवाज़ा बन्द न हो जाता तो वह भी नबी हो जाता।"

—हमामतुल बुशरा, पृ० 99, प्रकाशित सन् 1894 ई०

"नुबूवत का दावा नहीं, मुहद्दिस होने का दावा है जो अल्लाह तआला के हुक्म से किया गया है और इसमें क्या शक है कि मुहद्दिस होना भी एक कुल्लिया नुबूवत का भाग अपने अंदर रखता है।"

—इज़ाला औहाम, पृ० 421, रूहानी ख़ज़ाइन, पृ० 320, भाग-3, प्रकाशित सन् 1891 ई०

"इस (मुहद्दिस होने) को अगर एक लाक्षणिक (मजाज़ी) नुबूवत ठहराया जाए या एक कुल्लिया नुबूवत का भाग माना जाए तो क्या इससे नुबूवत का दावा आ गया?" —इज़ाला औहाम, पृ० 422, प्रकाशित सन् 1891 ई०

"मुहद्दिस जो रसूलों में से अनुयायी भी होता है और अपूर्ण रूप से नबी भी। अनुयायी इस वजह से कि वह पूरी तरह रसूल की शरीअत का ताबेदार और रिसालत के प्रकाश से लाभान्वित होता है और नबी इस वजह से कि अल्लाह तआला नबियों का-सा मामला उससे करता है और मुहद्दिस का वुजूद नबियों और उम्मतों में बरज़ख़ के तौर पर अल्लाह तआला ने पैदा किया है। वह हालाँकि पूरे तौर पर उम्मती (अनुयायी) है, मगर एक वजह से नबी भी होता है और मुहद्दिस के लिए ज़रूरी है कि वह किसी नबी के समरूप हो और ख़ुदा तआला के निकट वही नाम पावे जो उस नबी का नाम है।"

—इज़ाला औहाम, पृ० 569, रूहानी ख़ज़ाइन, पृ० 407, भाग-3, प्रकाशित सन् 1891 ई०

"इसके अलावा कि इसमें कोई संदेह नहीं कि यह आजिज़ (विनीत) ख़ुदा तआला की ओर से इस उम्मत के लिए मुहद्दिस होकर आया है और मुहद्दिस एक माने में नबी ही होता है। मानो कि इसके लिए नुबूवतनामा नहीं, मगर फिर भी आंशिक रूप में वह एक नबी ही है, क्योंकि वह ख़ुदा तआला से नुबूवत के हमकलाम (सहवार्ता) का एक शर्फ़ रखता है। ग़ैब की बातें उसपर ज़ाहिर की जाती हैं और रसूलों व नबियों की तरह उसकी वह्य को भी शैतान की दख़लंदाज़ी से पाक किया जाता है और शरीअत का सार उसपर खोला जाता है और हू-ब-हू नबियों की तरह नियुक्त होकर आता है, और नबियों की तरह उसपर अनिवार्य (फ़र्ज़) होता है कि अपने को बुलंद आवाज़ से ज़ाहिर करे और इससे इनकार करनेवाला एक हद तक सज़ा का पात्र ठहरता है और नुबूवत के माना सिवाए इसके और कुछ नहीं कि उपरोक्त बातें उसमें पाई जाएँ।"

—तौज़ीहुल मराम, पृ० 18, प्रकाशित सन् 1890 ई०

"यह कहना कि नुबूवत का दावा किया है कितनी जिहालत (अज्ञानता), कितनी मूर्खता और कितनी सच्चाई से दूरी है। ऐ नादानो! मेरी मुराद नुबूवत से यह नहीं कि मैं ख़ुदा की पनाह, आप हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के मुक़ाबिल खड़ा होकर नुबूवत का दावा करता हूँ या कोई नई शरीअत लाया हूँ। नुबूवत से मेरी मुराद सिर्फ़ यह है कि अल्लाह से बहुत ज़्यादा बातें और कलाम हो जो हज़रत मुहम्मद सल्ल० की पैरवी व अनुकरण से हासिल है। अतः (ख़ुदा से) बातचीत व संबोधन के आप लोग भी क़ायल हैं। अतः यह केवल शब्दों की लड़ाई हुई। यानी आप लोग जिस चीज़ का नाम (ख़ुदा से) बातचीत और संबोधन (मुकालिमा और मुख़ातिबा) रखते हैं, मैं उसकी अधिकता का नाम, अल्लाह के हुक्म की वजह से, नुबूवत रखता हूँ—व लिकुल्लि अय्यस्तलह।"

—परिशिष्ट हक़ीक़तुल वह्य, पृ० 68, प्रकाशित सन् 1907 ई०

अल्लाह का नबी

"मसीह मौऊद आनेवाला है। उसकी पहचान यह लिखी है कि वह अल्लाह का नबी होगा यानी ख़ुदा तआला से वह्य पानेवाला। किन्तु इस जगह तमाम व कामिला नुबूवत मुराद नहीं, क्योंकि तमाम व कामिला नुबूवत पर मुहर लग चुकी है, बल्कि वह नुबूवत मुराद है जो मुहद्दिसियत (हदीस की विद्वता) के भाव तक सीमित है, जो मुहम्मद (सल्ल०) की शरीअत के प्रकाश की रोशनी

से नूर हासिल करती है। अत: यह नेमत ख़ास तौर पर इसी बंदे को दी गई।"

—इज़ाला औहाम, पृ० 701, रूहानी ख़ज़ाइन, पृ० 478, भाग-3, प्रकाशित सन् 1891 ई०

मिर्ज़ा गुलाम अहमद क़ादियानी समय-समय पर अपने दृष्टिकोण और ख़यालात बदलते रहे। उन्होंने विलायत (वली होने) और मुहद्दिसियत (हदीस की विद्वता) से नुबूवत की ओर कमाल तरीक़े से पेशक़दमी की। जिस बात का वे खुलकर इनकार कर चुके थे, धीरे-धीरे उसके इक़रार की तरफ़ बढ़ते रहे। यह सिर्फ़ मिर्ज़ा साहब ही की जसारत थी, शायद वह किसी दूसरे को हासिल न हो सकी। सबसे पहले मसीह मौऊद का सरसरी तौर पर ज़िक्र करते हुए लिखते हैं—

"पहले तो जानना चाहिए कि मसीह के नाज़िल होने का अक़ीदा कोई ऐसा अक़ीदा नहीं है जो हमारे ईमानियात का कोई अंग या हमारे दीन के रुक्नों में से कोई रुक्न हो, बल्कि सैकड़ों पेशीनगोइयों में से एक पेशीनगोई है जिसका असल इस्लाम से कुछ भी संबंध नहीं। जिस ज़माने तक यह पेशीनगोई बयान नहीं की गई थी, उस ज़माने तक इस्लाम कुछ अपूर्ण (नामुकम्मल) नहीं था और जब बयान की गई तो उससे इस्लाम कुछ मुकम्मल नहीं हो गया।"

—इज़ाला औहाम, प्रथम संस्करण, पृ० 140, प्रकाशित सन् 1891 ई०

"अगर यह एतिराज़ पेश किया जाए कि मसीह का मसील (रूपक) भी नबी होना चाहिए, क्योंकि मसीह नबी था तो इसका जवाब पहले तो यही है कि आनेवाले मसीह के लिए हमारे दावे ने नुबूवत लाज़िम नहीं की, बल्कि साफ़ तौर पर यही लिखा है कि वह एक मुसलमान होगा और आम मुसलमानों की तरह अल्लाह की शरीअत का पाबंद होगा और इससे अधिक कुछ भी ज़ाहिर नहीं करेगा कि मैं मुसलमान हूँ और मुसलमानों का इमाम हूँ।"

—तौज़ीहुल मराम, पृ० 19, प्रकाशित सन् 1890 ई०

मसीह के सदृश बनने की कोशिश

मसीह के सदृश कहलाने के बारे में मिर्ज़ा साहब के विचार देखिए—

"और लेखक को इस बात का भी इल्म दिया गया है कि वह वक़्त का मुजददिद (यानी अपने समय का सुधारक) है और रूहानी तौर पर उसके कमालात मसीह इब्न मरियम के कमालात के समान हैं और एक को दूसरे से पूरी

तरह समानता और सदृशता है।"

—इश्तेहार अंकित 'तबलीग़े रिसालत', भाग-1, पृ० 15, मजमूआ इश्तेहारात, पृ० 24, भाग-1

"दीने इस्लाम के पूरी तरह ग़ालिब होने का जो वादा किया गया है वह ग़लबा मसीह के ज़रीए ज़ाहिर में आएगा और जब मसीह (अलै०) दोबारा इस दुनिया में तशरीफ़ लाएँगे तो उनके हाथ से इस्लाम समस्त संसार व कोने-कोने में फैल जाएगा, लेकिन इस आजिज़ पर ज़ाहिर किया गया है कि यह ख़ाकसार अपनी ग़ुरबत और विनम्रता और भरोसा और त्याग और आयतों और अनवार (रौशनियों) के अनुसार मसीह की पहली ज़िन्दगी का नमूना है और इस बन्दे का स्वभाव और मसीह का स्वभाव परस्पर अत्यंत ही सदृश घटित हुआ है। मानो एक ही जौहर के दो टुकड़े या एक ही पेड़ के दो फल हैं और काफ़ी हद तक समरूपता है कि परोक्ष दृष्टि में अत्यंत ही बारीक भिन्नता है।"

—बराहीने अहमदिया, पृ० 499, भाग-5, रूहानी ख़ज़ाइन, पृ० 593, भाग-1, टिप्पणी पर टिप्पणी 3, प्रकाशित सन् 1908 ई०

"मुझे मसीह इब्न मरियम होने का दावा नहीं और न ही मैं आवागमन का माननेवाला हूँ, बल्कि मुझे तो केवल मसीह के समान होने का दावा है। जिस प्रकार मुहद्दिसियत नुबूवत के समान होती है ऐसे ही मेरी रूहानी हालत मसीह इब्न मरियम की रूहानी हालत से निहायत दर्जे की समानता रखती है।"

—मजमूआ इश्तेहरात, पृ० 221, भाग-1, अंकित : तबलीग़ रिसालत, भाग-2, पृ० 21

इस आजिज़ (गुलाम) ने जो मसीह के समान होने का दावा किया है, जिसको कम समझ लोग मसीह मौऊद ख़याल कर बैठे हैं, यह कोई नया दावा नहीं जो आज मेरे मुँह से सुना गया हो, बल्कि वह वही पुराना इलहाम (ईश-प्रेरणा) है जो मैंने ख़ुदा तआला से पाकर 'बराहीने अहमदिया' के कई स्थानों पर सविस्तार अंकित कर दिया था, जिसके प्रकाशित करने पर सात साल से भी कुछ अधिक समय गुज़र गया होगा। मैंने यह दावा हरगिज़ नहीं किया कि मैं मसीह इब्न मरियम हूँ। जो व्यक्ति यह आरोप मेरे ऊपर लगाए, वह पूरी तरह फ़रेबी और झूठा, बल्कि मेरी ओर से अर्सा सात-आठ साल से बराबर यही प्रकाशित हो रहा है कि मसीह के समान व समरूप हूँ। यानी हज़रत ईसा (अलै०) की कुछ आध्यात्मिक (रूहानी) विशेषताएँ—स्वभाव और आदत और नैतिकता आदि

अल्लाह तआला ने मेरी प्रकृति में भी रखी हैं।"

—इज़ाला औहाम, पृ० 190, भाग-3, प्रकाशित सन् 1891 ई०

"यह बात सच है कि अल्लाह जल-ल शानहू (महान् प्रतापवान) की वह्य और इलहाम से मैंने मसीह के समान होने का दावा किया है। मैं उसी इलहाम के आधार पर अपने को उसी मौऊद के समान समझता हूँ जिसको लोग भ्रमवश मसीह मौऊद कहते हैं। मुझे इस बात से इनकार नहीं कि मेरे सिवा कोई और मसीह के समान भी आनेवाला हो।"

—मजमूआ इश्तेहरात, पृ० 207, भाग-1, इश्तेहार 11 फ़रवरी, सन् 1891 ई०

हक़ीक़त खुल गई

प्रिय पाठकगण ग़ौर कीजिए, उपरोक्त बयानों और उद्धरणों में मिर्ज़ा साहब ने अपने आपको मसीह के समान साबित करने की कैसी कोशिश की है और इस बात का शिद्दत से इनकार किया है कि वह ईसा इब्ने मरियम हैं, बल्कि ऐसा समझने और कहनेवाले को झूठा और कज़्ज़ाब बताया है। न पता वह कौन-सी ज़रूरत और मजबूरी थी कि अपने आपको केवल मसीह के समान होने का दावा करता व्यक्ति, फिर मसीह इब्न मरियम ही होने का दावा कैसे कर बैठा। मिर्ज़ा साहब कहते हैं—

"मगर जब समय आ गया तो वह रहस्य मुझे समझाया गया तब मैंने मालूम किया मेरे इस मसीह मौऊद होने के दावे में कोई नई बात नहीं। यह वही दावा है जो बराहीने अहमदिया में बार-बार सविस्तार लिखा जा चुका है।"

—कश्ती-ए-नूह, पृ० 47, प्रकाशित सन् 1902 ई०

"और यही ईसा है जिसका इंतिज़ार था और इलहामी इबारतों में मरियम और ईसा से मैं ही मुराद हूँ। मेरे बारे ही में कहा गया है कि उसको निशान बना देंगे और यह भी कहा गया कि यह वही मरियम का बेटा ईसा है जो आनेवाला था, जिसमें लोग शक करते हैं। यही हक़ है और आनेवाला यही है और शक सिर्फ़ नासमझी से है।" —कश्ती-ए-नूह, पृ० 48/94, प्रकाशित सन् 1902 ई०

"सोचो कि ख़ुदा जानता था कि इस मर्म के ज्ञान होने से यह दलील कमज़ोर हो जाएगी इसलिए मानो उसने 'बराहीने अहमदिया' के तीसरे भाग में मेरा नाम मरियम रखा, फिर जैसा कि बराहीने अहमदिया से स्पष्ट है कि दो साल तक मरियम के गुणों के साथ मैंने परवरिश पाई और परदे में पालन-पोषण होता रहा। फिर मरियम की तरह ईसा की रूह मुझमें फूँकी गई और इस्तिआरा (रूपक) के

रंग में मुझे गर्भवती किया गया और अंततः कई महीने के बाद जो दस महीने से ज़्यादा नहीं, उस इलहाम के ज़रिए से जो सबसे आख़िर, बराहीने अहमदिया, भाग-4, पृ० 556 में अंकित है, मुझे मरियम से ईसा बनाया गया। अतः इस तौर से मैं इब्न मरियम ठहरा और ख़ुदा ने बराहीन अहमदिया के वक़्त में इस रहस्य की मुझे ख़बर न दी।" —कश्ती-ए-नूह, पृ० 97, प्रकाशित सन् 1902 ई०

"बड़े औलिया जिनपर परोक्ष खुल चुका है और कई करामात के मालिक हैं, एक साथ इस बात पर गवाह हैं कि मसीह मौऊद चौदहवीं सदी से पहले, चौदहवीं सदी के आरंभ में होगा और इससे सीमोल्लंघन न करेगा। अतः हम नमूने के तौर पर किसी क़द्र इस रिसाला में लिख भी आए हैं और स्पष्ट है कि इस समय सिवाए इस आजिज़ (ग़ुलाम) के और कोई व्यक्ति दावेदार इस पद का नहीं।" —इज़ाला औहाम, पृ० 685, प्रकाशित 1891 ई०

"हर व्यक्ति समझ सकता है कि इस वक़्त जो मौऊद के ज़ाहिर होने का वक़्त है कि किसी ने सिवाए इस आजिज़ के दावा नहीं किया कि मैं मसीह मौऊद हूँ, बल्कि इस मुद्दत—तेरह सौ वर्ष—में कभी किसी मुसलमान की तरफ़ से ऐसा दावा नहीं हुआ कि मैं मसीह मौऊद हूँ। यक़ीनन समझो कि नाज़िल होनेवाला इब्न मरियम यही है जिसने ईसा बिन मरियम की तरह अपने ज़माने में किसी ऐस शेख़ वालिद रूहानी को न पाया जो उसकी रूहानी पैदाइश का सबब ठहरता, तब ख़ुदा तआला ख़ुद इसका मुतवल्ली हुआ और तरबियत की, गोद में लिया और इस बंदे का नाम इब्न मरियम रखा। अतः मुमकिन तौर पर यही ईसा बिन मरियम है जो बिना बाप के पैदा हुआ। क्या तुम साबित कर सकते हो, क्या तुम सबूत दे सकते हो कि तुम्हारे चारों सिलसिलों में से किसी सिलसिले में दाख़िल है। फिर यह अगर इब्न मरियम नहीं तो कौन है?"

—इज़ाला औहाम, पृ० 656, भाग-3, प्रकाशित सन् 1891 ई०

नुबूवत का एलान

इस सिलसिले में ख़ुद मिर्ज़ा साहब क्या कहते हैं, देखिए—

"जिस बुनियाद पर मैं अपने को नबी कहता हूँ, वह केवल इतनी है कि मैं अल्लाह तआला से हमकलामी से मुशर्रफ़ हूँ और वह मेरे साथ बहुत ज़्यादा बात करता और बोलता है और मेरी बातों का जवाब देता है और बहुत-सी परोक्ष (ग़ैब) की बातें मेरे ऊपर ज़ाहिर करता है और भावी युगों के वे रहस्य मेरे ऊपर खोलता है कि जब तक इनसान को उसके साथ ख़ुसूसियत की निकटता न हो,

दूसरे पर वह रहस्य नहीं खोलता और उन्हीं बातों की अधिकता की वजह से उसने मेरा नाम नबी रखा, इसलिए मैं ख़ुदा के हुक्म के मुताबिक़ नबी हूँ और अगर मैं इससे इनकार करूँ तो बड़ा गुनाह होगा और जिस हालत में ख़ुदा मेरा नाम नबी रखता है तो मैं कैसे इनकार कर सकता हूँ। मैं इसपर क़ायम हूँ उस वक़्त तक जो इस दुनिया से गुज़र जाऊँ।"

—मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी का ख़त, तारीख़ 23 मई सन् 1908 ई०, बनाम : अख़बार आम लाहौर, हक़ीक़तुल सुबूत, पृ० 270 से 271, प्रकाशित सन् 1907 ई०

मुहम्मद मुस्तफ़ा (सल्ल०) हैं, ऐन मुहम्मद हैं—का दावा

मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी अपने आपको मसीह मौऊद साबित करने के बाद अब अपने आपको मुहम्मद मुस्तफ़ा (सल्ल०) साबित करने की कोशिश करते हुए कहते हैं—

"इधर बच्चा पैदा हुआ और उसके कान में अज़ान दी जाती है और शुरू ही में उसको ख़ुदा और रसूल पाक का नाम सुनाया जाता है। ठीक इसी प्रकार यह बात मेरे साथ घटित हुई। मैं अभी अहमदियत में बच्चे की ही शक्ल में था जो मेरे कान में यह आवाज़ पड़ी कि "मसीह मौऊद मुहम्मद अस्त ऐन मुहम्मद अस्त (यानी मसीह मौऊद मुहम्मद हैं, ऐन मुहम्मद हैं)।"

—अख़बार अल-फ़ज़्ल, क़ादियान, तारीख़ 21 अक्तूबर, सन् 1931 ई०

"मैं इससे बिलकुल बेख़बर था कि मसीह मौऊद पुकार-पुकारकर कह रहा है कि—"मनम मुहम्मद व अहमद मुज्तबा बाशद" (यानी मैं मुहम्मद व अहमद मुज्तबा हूँ)। फिर मैं इस मुशकिल से बेख़बर था कि ख़ुदा का हर चुना हुआ नबी अपने आपको बरूज़े मुहम्मद (सल्ल०) कहता है और बड़े ज़ोर से दावा करता है कि मैं बुरूज़ी तौर पर वही नबी ख़ातमुल अम्बिया हूँ।"

एक ग़लती का निवारण

"फिर मुझे यह मालूम न था कि बड़े हौसलेवाले नबी हज़रत मसीह मौऊद को मानने से ख़ुदा के नज़दीक सहाबा की जमाअत में दाख़िल हो गया हूँ, हालाँकि वह ख़ुदा का नबी इलहामी शब्दों में कह चुका था कि जो मेरी जमाअत में शामिल हुआ और असल में मेरे सरदार ख़ैरुल मुर्सलीन (सल्ल०) के सहाबा में दाख़िल हुआ।"

—रूहानी ख़ज़ाइन, पृ० 258, भाग-16, ले० : मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी

मिर्ज़ाइयों का मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी को अल्लाह के रसूल हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) से श्रेष्ठ बताना

मिर्ज़ाइयों का अक़ीदा है कि मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी को न केवल नबियों, बल्कि रसूलों के सरदार हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) पर भी बड़ाई हासिल है। मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी अपनी किताब "ज़िक्रे इलाही" पृ० 19 पर लिखते हैं—

"अत: मेरा ईमान है कि हज़रत मसीह मौऊद (अलै०) रसूले करीम (सल्ल०) के नक़्शे क़दम पर इतने चले कि नबी हो गए। लेकिन क्या उस्ताद और शागिर्द का एक दर्जा हो सकता है, मानो शागिर्द इल्म के लिहाज़ से उस्ताद के बराबर भी हो जाए फिर भी उस्ताद के सामने बड़े ही अदब और विनम्रता के साथ ही बैठेगा। यही संबंध हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) और हज़रत मसीह मौऊद में है।"

—तक़रीर मियाँ मुहम्मद ख़लीफ़ा क़ादियानी, अख़बार अलहकम, 18 अप्रैल सन् 1914 ई०

"इस्लाम पहली के चाँद की तरह शुरू हुआ और मुक़द्दर था, परिणामत: अंतिम ज़माने में बद्र (अर्थात् चौदवीं का चाँद) हो जाए ख़ुदा तआला के हुक्म से। अत: ख़ुदा तआला की हिकमत ने चाहा कि इस्लाम इस शताब्दी में बद्र की शक्ल इख़तियार करे, जो गिनती के आधार पर बद्र (पूर्ण चाँद) के समरूप हो (यानी चौदहवीं शताब्दी)। अत: इन्हीं अर्थों की ओर संकेत है अल्लाह तआला के इस कथन में कि—"व लक़द् न-स-र-कुमुल्लाहु बि-बद्रि (यानी और तुम्हारी मदद कर चुका है अल्लाह बद्र की लड़ाई में)"

"हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की पहली रिसालत में आपके इनकारियों को काफ़िर और इस्लाम के दायरे से ख़ारिज क़रार देना, लेकिन उनकी दूसरी रिसालत में आपके इनकारियों को इस्लाम में दाख़िल समझना यह हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की शान और अल्लाह की आयतों का मज़ाक़ उड़ाना है, हालाँकि ख़ुतब-ए-इलहामिया में मसीह मौऊद ने आप (सल्ल०) की पहली रिसालत और दूसरी रिसालत के पारस्परिक संबंध को हिलाल (यानी पहली का चाँद) और बद्र (यानी चौदवीं का चाँद) के संबंध से परिभाषित किया है।"

—अख़बार अल-फ़ज़्ल क़ादियान, भाग-3, पृ० 10, प्रकाशित तिथि 15 जुलाई, सन् 1915 ई०

मशहूर क़ादियानी शायर क़ाज़ी अकमल के शेरों को देखिए जो उन्होंने मिर्ज़ा गुलाम अहमद क़ादियानी की शान में उनकी मौजूदगी में पढ़े और मिर्ज़ा साहब ने उन शेरों को पसन्द किया—

मुहम्मद फिर उतर आए हैं हममें,
और आगे से हैं बढ़कर अपनी शान में।
मुहम्मद देखने हों जिसने अकमल,
गुलाम अहमद को देखे क़ादियाँ में॥

यानी मानो मिर्ज़ा गुलाम अहमद क़ादियानी न सिर्फ़ हू-ब-हू मुहम्मद मुस्तफ़ा (सल्ल०) हैं, बल्कि अपनी शान के एतिबार से मुहम्मद मुस्तफ़ा (सल्ल०) से बढ़कर हैं—"नऊज़ुबिल्लाहि मिन् ज़ालिक" (हम इससे अल्लाह की पनाह चाहते हैं।)

इमाम मेहदी और हज़रत ईसा (अलै०) दो अलग-अलग शख़्सियतें

यह बात हदीसों से स्पष्ट रूप से साबित है कि इमाम मेहदी और हज़रत ईसा (अलै०) दो अलग-अलग शख़्सियतें हैं। इमाम मेहदी का आना पहले होगा और हज़रत ईसा (अलै०) का बाद में, जबकि मिर्ज़ा साहब इस बात के दावेदार हैं कि वह इमाम मेहदी भी हैं और ईसा अलै० (मौऊद) भी। हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) और उसके बाद रसूल (सल्ल०) के सहाबियों में से कोई व्यक्ति भी इस बात का क़ायल न था कि हज़रत इमाम मेहदी और हज़रत ईसा (अलै०) दोनों एक ही शख़्सियत (व्यक्तित्व) हैं। सहाबा के दौर के बाद ताबईन, तबअ ताबईन यहाँ तक कि इस वक़्त तक सिवाए मिर्ज़ा साहब के कोई भी व्यक्ति इस बात का क़ायल नहीं। यानी रसूल (सल्ल०) की हदीसों और सहाबा किराम के अमल से यह बात बिलकुल स्पष्ट है।

मिर्ज़ा साहब मसीह के अवतरण के क़ायल न थे, बल्कि इसको शिर्क समझते थे। मिर्ज़ाइयों का अक़ीदा है कि हज़रत ईसा (अलै०) मर चुके हैं। उनको ज़िन्दा समझना शिर्क है और क़ियामत के निकट हरगिज़ तशरीफ़ नहीं लाएँगे और जो ईसा (अलै०) इब्न मरियम नाज़िल होनेवाले हैं, वे मिर्ज़ा साहब हैं।

"तुम यक़ीन जानो कि ईसा इब्न मरियम मर चुका है कश्मीर, श्रीनगर, मुहल्ला ख़ानयार में उसकी क़ब्र है।"

—कश्तीए नूह, पृ०33, हाशिया अज़ हक़ीक़त मतबूआ, सन् 1902 ई०

यहाँ भी ग़ौर करने की ज़रूरत है। हज़रत ईसा (अलै०) मरियम के बेटे हैं और मिर्ज़ा साहब मिर्ज़ा गुलाम मुर्तज़ा के। और हज़रत ईसा (अलै०) अल्लाह के हुक्म से हज़रत मरियम के पेट से बग़ैर बाप के पैदा हुए और हदीसों में जिस मसीह इब्न मरियम के नाज़िल होने का उल्लेख आया है वह हज़रत इमाम मेहदी के काफ़ी देर बाद पैदा होगा और वही मसीह इब्न मरियम होगा। मिर्ज़ा साहब ने अपने आपको मसीह के सदृश बताया है, हालाँकि हदीस व क़ुरआन में कहीं भी मसीह के सदृश होने का ज़िक्र नहीं, बल्कि हदीसों में इस बात की व्याख्या की गई है कि इमाम मेहदी दमिश्क़ की जामा मसजिद में सुबह की नमाज़ के लिए मुसल्ला पर खड़े होंगे। यकायक पूर्वीय मिनारे पर ईसा (अलै०) का नुज़ूल दो

फ़रिश्तों के सहारे पर हो गया और इमाम मेहदी हज़रत ईसा (अलै०) को देखकर मुसल्ला से हट जाएँगे और अर्ज़ करेंगे कि ऐ अल्लाह के नबी ! आप इमामत कराएँ। हज़रत ईसा (अलै०) फ़रमाएँगे कि तुम्ही नमाज़ पढ़ाओ। यह इक़ामत तुम्हारे लिए कही गई है। इमाम मेहदी नमाज़ पढ़ाएँगे और हज़रत ईसा (अलै०) पैरवी करेंगे, ताकि यह मालूम हो जाए कि रसूल होने की हैसियत से नाज़िल नहीं हुए हैं, बल्कि उम्मते मुहम्मदिया के ताबे (अधीन) और मुजददिद होने की हैसियत से आए हैं। —अल उर्फ़ लिवर्द, पृ० 72, भाग-2

पाठकगण ग़ौर करें कि हज़रत ईसा जिस मिनारे से अवतरित (नाज़िल) होंगे वह पहले से मौजूद होगा न कि अपने नाज़िल होने के बाद अपनी मौजूदगी में तामीर कराएँगे। इन सब व्याख्याओं से स्पष्ट होता है कि हज़रत ईसा (अलै०) और इमाम मेहदी दो अलग-अलग शख़्स होंगे, जबकि मिर्ज़ा साहब अपने को मेहदी और मसीह मौऊद दोनों होने का एक साथ दावा करते हैं।

मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद न मेहदी, न मसीह मौऊद

हदीसों में इमाम मेहदी और हज़रत ईसा (अलै०) के जो लक्षण और अलामतें बताई गई हैं, मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद की ज़िन्दगी उनसे ख़ाली नज़र आती है।

इमाम मेहदी हसन बिन अली (रज़ि०) की औलाद से होंगे और मिर्ज़ा जी मुग़ल ख़ानदान से थे, सैयद न थे।

इमाम मेहदी का नाम मुहम्मद, पिता का नाम अब्दुल्लाह और माता का नाम आमिना होगा। मिर्ज़ा जी का नाम ग़ुलाम अहमद, पिता का नाम ग़ुलाम मुर्तज़ा और माता का नाम चिराग़ बीबी था।

इमाम मेहदी मदीना मुनव्वरा में पैदा होंगे और फिर मक्का आएँगे। मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद ने मक्का-मदीना की शक्ल भी नहीं देखी और हज बैतुल्लाह से महरूम रहे।

इमाम मेहदी पूरी दुनिया के बादशाह होंगे और संसार को न्याय व इनसाफ़ से भर देंगे। मिर्ज़ा साहब तो अपने पूरे गाँव के भी चौधरी न थे। जब कभी ज़मीन का कोई झगड़ा पेश आता तो गुरुदासपुर की कचेहरी में जाकर फ़रियाद करते थे।

इमाम मेहदी 'शाम' (सीरिया) देश में जाकर दज्जाल के लशकर से जंग करेंगे। मिर्ज़ा साहब को दमिश्क़ और बैतुल मक़दिस का मुँह देखना नसीब न हुआ। मक्का मुकर्रमा में मुसलमान मक़ामे इबराहीम और हजरे असवद के बीच उनसे बैअत करेंगे और उनको अपना इमाम तसलीम करेंगे। इमाम मेहदी बैतुल मक़दिस में वफ़ात पाएँगे और वहीं दफ़न होंगे और हज़रत ईसा (अलै०) उनकी नमाज़े जनाज़ा पढ़ाएँगे, जबकि मिर्ज़ा जी लाहौर (पाकिस्तान) में मरे और क़ादियान में दफ़न हुए।

हज़रत ईसा (अलै०) बिना बाप के हज़रत मरियम (अलै०) के पेट से पैदा हुए और मिर्ज़ा के वालिद ग़ुलाम मुर्तज़ा और वालिदा चिराग़ बीबी थीं।

पाक हदीसों में आनेवाले मसीह के लक्षण व गुणों का उल्लेख करते हुए बताया गया कि वह शासक और न्याय करनेवाले होंगे और हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की शरीयत के मुताबिक़ निर्णय करेंगे जबकि मिर्ज़ा साहब को तो अपने गाँव क़ादियान की हुकूमत भी हासिल न थी। मिर्ज़ा साहब जब कभी महसूस

करते कि उनपर ज़ुल्म हो रहा है और उनका हक़ मारा जा रहा है तो उसके लिए अंग्रेज़ी अदालत के हुक्मरानों से गुरुदासपुर जाकर फ़रियाद करते। इस प्रकार मिर्ज़ा साहब का यह दावा करना कि आनेवाले मसीह से मुराद मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी है, हदीस से खुला हुआ मज़ाक़ और उसकी खुली हुई तौहीन है।

हज़रत ईसा (अलै०) के बारे में आया है कि वह सलीब को तोड़ेगा और ख़िंज़ीर (Pig) को क़त्ल करेगा। यानी ईसाइयत का ख़ातिमा हो जाएगा और कोई ख़िंज़ीर (यानी सुअर) खानेवाला बाक़ी न रहेगा। अब यह बात तो मिर्ज़ा साहब की उम्मत ही बताएगी कि मिर्ज़ा साहब ने कितनी सलीबें तोड़ीं और कितने सुअर क़त्ल किए। जबकि हक़ीक़त यह है कि मिर्ज़ा साहब के आने से सलीब और सलीब परस्तों को कोई नुक़सान नहीं पहुँचा, बल्कि मिर्ज़ा साहब सारी उम्र सलीब परस्तों की तरक़्क़ी व ऊँचे दर्जों के लिए दुआ करते रहे और उनकी हर मुमकिन मदद करते रहे।

वह लड़ाई को उठा देगा, और एक जगह आया है कि वह जिज़िया को ख़त्म कर देगा। यानी सब लोग मुसलमान हो जाएँगे, कोई ख़ुदा और उसके रसूल और इस्लाम धर्म का दुश्मन बाक़ी न रहेगा, जिनसे जिहाद (धर्मयुद्ध) व जंग की जाए और जिज़िया वसूल किया जाए। वह, यानी आनेवाला मसीह जिहाद व जिज़िया को मंसूख़ (रद्द) न करेगा, बल्कि इसकी ज़रूरत ही बाक़ी न रहेगी। बल्कि यह शरीअते मुहम्मदिया (सल्ल०) का ही हुक्म होगा जिसको हज़रत मसीह (अलै०) लागू करेंगे।

मिर्ज़ा साहब बेचारे जिज़िया तो क्या मंसूख़ करते वे सारी उम्र अंग्रेज़ों के भूमिकरदाता रहे और आयकर माफ़ कराने के लिए उनसे प्रार्थनाएँ करते रहे।

वह माल को पानी की तरह बहा देगा और कोई सदक़ा-ख़ैरात लेनेवाला न मिलेगा। यानी सभी लोग धनी हो जाएँगे और कोई माँगनेवाला और ज़रूरतमंद बाक़ी न रहेगा।

मिर्ज़ा साहब के ज़माने में इसके विपरीत हुआ। हिन्दुस्तानी मुसलमान अंग्रेज़ों के महकूम (अधीन) हो गए। वे ग़रीबी और भुखमरी के शिकार हुए। यहाँ तक कि मिर्ज़ा साहब को भी अपने घरेलू ख़र्च, लंगरख़ाना व प्रेस और कुतुबख़ाना चलाने के लिए लोगों से चंदा माँगने पर मजबूर होना पड़ा।

हज़रत मसीह (अलै०) के नुज़ूल के समय इबादत इतनी मज़ेदार हो जाएगी कि

एक सजदा के मुक़ाबले में दुनिया और उसकी सारी दौलत तुक्ष्य लगेगी।

मिर्ज़ा साहब के ज़माने में ख़ुदापरस्ती के बजाए दुनियापरस्ती व ऐशो इशरत का प्रभाव बढ़ा, यहाँ तक कि मिर्ज़ा साहब का घराना भी सुरक्षित न रह सका। जिन लोगों ने मिर्ज़ा साहब के घरवालों व परिजन को अंदर से जाकर देखा है, उनकी कहने के मुताबिक़ मिर्ज़ा साहब के ख़लीफ़ा राशिद मिर्ज़ा महमूद के घराने और अंग्रेज़ी सभ्यता और उसके समाज के बीच अन्तर करना मुमकिन न था।

हज़रत ईसा (अलै०) दमिश्क़ शाम की जामा मसजिद के पूर्वीय किनारे पर आसमान से उतरेंगे। उतरने के बाद लुद्द नामक शहर में दज्जाल को क़त्ल करेंगे। एक हदीस में है कि वे हज व उमरा करेंगे, मक्का मुकर्रमा आएँगे और फिर मदीना मुनव्वरा आएँगे और रौज़-ए-मुबारक (हुज़ूर की पाक क़ब्र) पर हाज़िर होकर दरूद व सलाम भेजेंगे। हदीस में है कि नाज़िल होने के बाद चालीस साल ज़िन्दा रहेंगे, मदीना मुनव्वरा में वफ़ात पाएँगे और हुज़ूर (सल्ल०) की पाक क़ब्र के निकट दफ़्न होंगे।

मसीह (अलै०) जिस मिनारे पर उतरेंगे वह मिनारा पहले से मौजूद होगा, जबकि मिर्ज़ा साहब ने नाज़िल होने से पहले लोगों से चंदा माँगकर मिनारा बनाया, जिसका नाम 'मिनारतुल मसीह' रखा। मालूम नहीं वह कौन-सा दज्जाल है जिसको मिर्ज़ा ने क़त्ल किया और कहाँ क़त्ल किया?

मिर्ज़ा साहब को न हज की तौफ़ीक़ मिली और न उमरा की, तो वह रौज़-ए-मुबारक पर हाज़िरी देकर सलाम क्या पेश करते। मिर्ज़ा साहब नुबूवत के दावे के कुछ साल बाद लाहौर में मर गए और क़ादियान में दफ़्न हुए।

प्रिय पाठको! आपने मसीह (अलै०) की वह अलामतें व लक्षण पढ़े जो हदीसों की मोतबर (विश्वसनीय) किताबों में बयान हुई हैं। उनमें की कोई अलामत भी मिर्ज़ा साहब में नहीं पाई जाती। इन वाज़ेह हदीसों के मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद के माननेवाले जो माने और मतलब चाहें बयान करें, लेकिन सच्चाई को छिपाया नहीं जा सकता।

अब जिसका जी चाहे हक़ (सच्चाई) को क़बूल करे और जिसका जी चाहे झूठ और मक्र व फ़रेब की पैरवी करे। —"व मा अलैना इल्लल बलाग़" (यानी हमारे ज़िम्मा सीधी-सच्ची राह दिखाने के सिवा कुछ नहीं)।

क़ुरआन व हदीस में फेर-बदल तथा इलहामात, तावीलें और दावे

क़ुरआन मजीद में फेर-बदल

क़ुरआन मजीद में मिर्ज़ा साहब ने जो परिवर्तन व फेर-बदल किए हैं, उनका सिलसिला बहुत लम्बा है। मिर्ज़ा जी ने क़ुरआन मजीद की उन आयतों को जिनमें नबी करीम (सल्ल०) की तारीफ़ें बयान हुई हैं और जिन आयतों में नबी करीम (सल्ल०) को अल्लाह तआला ने मुख़ातब किया है, बड़ी चालाकी से अपने ऊपर चरितार्थ (फिट) करने की कोशिश की है और क़ुरआन मजीद की आयतों में परिवर्तन कर डाला है। सूरा अस-सफ़्फ़ की वह आयत जो बहुत मशहूर है, जिसमें सारे जहान के मालिक अल्लाह तआला ने हज़रत ईसा (अलै०) का क़ौल (कथन) नक़ल करते हुए फ़रमाया कि (मसीह ने कहा) "मैं अल्लाह का रसूल हूँ और तौरात की तसदीक़ करनेवाला हूँ और अपने बाद आनेवाले रसूल की ख़ुशख़बरी देनेवाला हूँ जिनका नाम अहमद होगा।" मिर्ज़ाई लोग भोले-भाले लोगों को गुमराह करने के लिए क़ुरआन की इस आयत का ग़लत मतलब पेश करके यह बताने की कोशिश करते हैं कि देखो अल्लाह तआला ने क़ुरआन मजीद में मिर्ज़ा साहब के नबी होने की ख़ुशख़बरी दी है। जबकि क़ुरआन मजीद हज़रत ईसा (अलै०) की ज़बाने पाक से इस बात का एलान करा रहा है कि मैं अल्लाह का रसूल हूँ और अपने सामने मौजूद तौरात की तसदीक़ (पुष्टि) करता हूँ और अपने बाद आनेवाले रसूल की शुभ-सूचना देता हूँ, जिनका नाम 'अहमद' होगा।

ग़ौर करने लायक़ बात यह है कि हज़रत ईसा (अलै०) के बाद हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) तशरीफ़ लाए या मिर्ज़ा जी। अगर—अल्लाह की पनाह—हज़रत ईसा और मिर्ज़ा जी के बीच कोई फ़ासिला न होता तो शायद कुछ नादानों को धोखा देने के लिए यह फ़रेब काम कर जाता, जबकि क़ुरआन मजीद की इबारत साफ़ बता रही है कि हज़रत ईसा (अलै०) ने अपने बाद आनेवाले नबी की शुभ-सूचना दी है। सीरत (हुज़ूर सल्ल० की जीवनी) की किताबों में यह बात तफ़सील से बयान की गई है कि जनाब नबी करीम (सल्ल०) का नाम 'मुहम्मद' आपके दादा मुहतरम अब्दुल मुत्तलिब ने और आपकी माँ ने आपका नाम 'अहमद' रखा। क़ुरआन मजीद में और कई दूसरे नामों से भी अल्लाह के

आख़िरी नबी हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) को पुकारा गया है।

इसके अलावा भी अल्लाह तआला ने क़ुरआन मजीद में जो आयतें जनाब नबी करीम (सल्ल०) की मुबारक शान में अवतरित की हैं, मिर्ज़ा जी फ़रमाते हैं कि उन आयतों का संबंध मुझसे है और वह मुझपर पूर्ण घटित हैं। इसकी कुछ मिसालें देखें—

- व मा अर्सल्ना-क इल्ला रह्-म-तल् लिल् आलमीन

मायने : और हमने तुमको तमाम दुनिया के लिए रहमत बनाकर भेजा है। (क़ुरआन 21 : 107)
—तज़्किरा, पृ० 94, 289

- व र-फ़अ्-ना ल-क ज़िक्रक।

मायने : और तुम्हारा ज़िक्र बुलंद किया। (क़ुरआन 94 : 4)
—तज़्किरा, पृ० 81, 385, संस्करण-3

- यासीन, वल् क़ुरआनिल्‌हकीम, इन्न-क लमिनल मुर्सलीन।

मायने : यासीन, क़सम है क़ुरआन की, जो हिकमत से भरा हुआ है। निस्संदेह, तुम रसूलों में से हो। (क़ुरआन 36 : 1-3)
—तज़्किरा, पृ० 479

- या अय्युहल-मुद्दस्सिरु, क़ुम फ़-अन-ज़िर, व रब्ब-क फ़-कब्बिर।

मायने : ऐ ओढ़ने-लपेटनेवाले, उठो और सावधान करने में लग जाओ, और अपने परवरदिगार की बड़ाई करो। (क़ुरआन 74 : 1-3)
—तज़्किरा, पृ० 51, संस्करण-3

- क़ुल इन्न-मा अ-ना ब-श-रुम-मिस्लुकुम यूहा इलैय-य अन्न-मा इलाहु-कुम इलाहुँव्वाहिद।

मायने : कह दो कि मैं तुम्हारी तरह एक इनसान हूँ, हालाँकि मेरी ओर वह्य आती है कि तुम्हारा पूज्य-प्रभु (इलाह) बस अकेला प्रभु है। (क़ुरआन 18 : 110)
—तज़्किरा, पृ० 245, 278, 365, 436, 639, संस्करण-3

- क़ुल् या अय्युहन्नासु इन्नी रसूलुल्लाहि इलैकुम जमी-अ।

मायने : कहो : ऐ लोगो! मैं तुम सबकी ओर अल्लाह का भेजा हुआ रसूल हूँ। (क़ुरआन 7 : 158)
—हमामतुल बुशरा, भाग-2, पृ० 56

इससे बढ़कर और क्या दुस्साहस हो सकता है जिसपर मातम किया जाए। काश ! क़ादियानी इसपर ग़ौर करते ! मिर्ज़ा जी अगर पूरे क़ुरआन मजीद के बारे में भी फ़रमा देते कि यह मेरे ऊपर उतरा है तो उनसे क्या दूर था ?

कलमा के शब्दों और अर्थ में परिवर्तन

कहने को तो क़ादियानी यह दावा करते हैं कि हमारा कलिमा दूसरे मुसलमानों से अलग नहीं, लेकिन मुसलमानों के नज़दीक "ला इला-ह इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह" का इक़रार ईमान लाने के लिए काफ़ी है, जिसका अर्थ है— "अल्लाह के सिवा कोई इलाह (पूज्य-प्रभु) नहीं और मुहम्मद (सल्ल०) अल्लाह के रसूल हैं।" लेकिन क़ादियानियों के निकट किसी भी व्यक्ति का ईमान उस वक़्त तक पूर्ण और मोतबर नहीं जब तक कि वह अल्लाह के पालनहार होने के इक़रार व हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की रिसालत के साथ मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद को ख़ुदा का नबी और रसूल तसलीम न करे। यह कलिमे में कितना बड़ा खुला परिवर्तन और उसकी तौहीन है। पाक कलिमे में इससे भी बढ़कर परिवर्तन किया है जो शाब्दिक है। मिर्ज़ा नासिर अहमद के अफ़्रीक़ा के सफ़र पर तसवीरी किताब "Africa Speaks" पर 'अहमद सेंटरल मसजिद, नाइजीरिया' का फ़ोटो मौजूद है, जिसपर यह कलिमा लिखा हुआ है—"ला इला-ह इल्लल्लाह, अहमद रसूलुल्लाह" इस कलिमे के शाब्दिक परिवर्तन में 'मुहम्मद' शब्द हटा दिया गया है और अहमद शब्द जोड़ दिया गया है।

मिर्ज़ा के इलहाम

क़ुरआन मजीद के उसूल के मुताबिक़ अल्लाह तआला ने अपने हर नबी को उसी क़ौम की ज़बान (भाषा) में वह्य भेजी जिस क़ौम की तरफ़ वह नबी बनाकर भेजा गया—"व मा अर्सल्ना मिर्रसूलिन इल्ला बिलिसानि क़ौमिही लियुबय्यि-न लहुम" यानी—हमने कोई रसूल नहीं भेजा, मगर उसकी क़ौम की ज़बान में ही ताकि उन्हें खोलकर बताए।" क़ुरआन मजीद के इस साफ़ उसूल के ख़िलाफ़ मिर्ज़ा साहब को विभिन्न भाषाओं (ज़बानों) में इलहाम हुए। सही बात तो यह है कि मिर्ज़ा साहब पर पंजाबी ज़बान में वह्य होती क्योंकि वे पंजाबी जानते थे, पंजाब के रहनेवाले थे और अवाम पंजाबी ज़बान को ही अच्छी तरह समझते थे। किन्तु पंजाबी ज़बान इस सौभाग्य से वंचित (महरूम) ही रही। यह कितनी अक़्ल के ख़िलाफ़ बात है कि नबी तो पंजाबी हो और उसको इलहाम किसी दूसरी ज़बान में हो। अतः मिर्ज़ा साहब लिखते हैं—

"यह बात अक़्ल के ख़िलाफ़ और बेहूदा है कि इनसान की असल ज़बान तो कोई और हो और इलहाम उसको किसी और ज़बान में हो जिसको वह समझ भी नहीं सकता, क्योंकि उसमें असह्य तकलीफ़ है और ऐसे इलहाम से फ़ायदा क्या हुआ जो इनसानी समझ से परे है।"

—चश्म-ए-मुवक़्क़िक़त, पृ० 20, रूहानी ख़ज़ाइन, पृ० 218, भाग-23

मिर्ज़ा साहब का दावा है कि मेरी वह्य और इलहाम क़ुरआन पाक की तरह हैं, लेकिन अगर आप मिर्ज़ा साहब के इलहामों का सरसरी जाइज़ा लेंगे तो यह बात खुलकर सामने आएगी कि मिर्ज़ा साहब के कितने ही इलहाम ऐसे हैं जिनको वे ख़ुद भी न समझ सकते थे। चुनाँचे, मिर्ज़ा साहब फ़रमाते हैं, "ज़्यादातर ताज्जुब की बात यह है कि कुछ इलहाम मुझे उन ज़बानों में भी होते हैं जिनकी मुझे कुछ जानकारी नहीं, जैसे—अंग्रेज़ी, संस्कृत या इबरानी आदि।"

—नुज़ूले मसीह, पृ० 57, रूहानी ख़ज़ाइन, पृ० 435, भाग-18

ग़ौर कीजिए, मिर्ज़ा साहब जिस ज़बान को ख़ुद नहीं जानते उस ज़बान के इलहाम को क्या समझते और दूसरों को क्या समझाते होंगे ?

यही बात नहीं कि मिर्ज़ा साहब ग़ैर-ज़बानों के इलहामों को न समझ सकते हों, बल्कि बहुत से उर्दू और अरबी इलहाम ऐसे भी हैं, जिनको मिर्ज़ा साहब भी न समझ सकते थे, जिसकी कुछ मिसालें पेश हैं—

"पेट फट गया।" —अल-बुशरा, पृ० 119, भाग-2

यह दिन के वक़्त इलहाम हुआ है, मालूम नहीं यह किसके बारे में है।

"लाहौर में एक बेशर्म" —अल-बुशरा, पृ० 126, भाग-2

कौन ? मालूम नहीं।

"एक दाना किस-किसने खाया।" —अल-बुशरा, पृ० 107, भाग-2

गुप्त इलहाम

बहुत से गुप्त इलहाम—280, 270, 140, 20, 270, 20, 26, 2, 228, 23, 15, 11, 1, 272 आदि-आदि।

—अल-बुशरा, पृ० 17, भाग-2; मजमूआ इलहामते मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी; मजमूआ इश्तेहरात, पृ० 301, भाग-1

इन इलहामों की हक़ीक़त मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद साहब पर भी न ज़ाहिर हो सकी :

• "रब्ब-न आज" यानी हमारा रब आजी है।" 'आजी' शब्द के अर्थ अभी तक मालूम नहीं हो सके।

—अल-बुशरा, पृ० 43, भाग-1, तज़्किरा, पृ० 102, संस्करण 3

• ग़सम, ग़सम, ग़सम

—अल-बुशरा, पृ० 50, भाग-2, तज़्किरा, पृ० 319, संस्करण 3

क्या यही इलहाम हैं जिनपर क़ादियानी नुबूवत की बुनियाद रखी गई है।

मिर्ज़ा जी की तावीलें

मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी ने अपनी नुबूवत की पहली ईंट ही तावील पर रखी। हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के "ख़ातमुन्नबीईन" होने का मतलब इसके सिवा और क्या हो सकता है कि आप अल्लाह तआला के आख़िरी नबी हैं। क़ुरआन मजीद के संदर्भ व निष्कर्ष, पवित्र हदीसों और सहाबा किराम (रज़ि०) इसी बात पर एकमत हैं कि अब हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के बाद कोई नबी आनेवाला नहीं। समस्त मुस्लिम समुदाय भी इस बात पर एक है और अरबी शब्दकोश भी इसी भाव की व्याख्या करते हैं, लेकिन मिर्ज़ा साहब और उनके माननेवाले 'ख़ातमुन्नबीईन' का मतलब नबियों की मुहर लेते हैं और इसका यह मतलब बयान करते हैं—"हज़रत नबी करीम (सल्ल०) के बाद जो नबी भी आएँगे, वह आप (सल्ल०) की मुहर लगाने से ही नबी बनेंगे।" एक दूसरी तावील क़ादियानी गिरोह यह करता है कि "नुबूवत का दरवाज़ा तो खुला हुआ है, अलबत्ता कमाल दर्जे की नुबूवत हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) पर ख़त्म हो गई और आप (सल्ल०) सारे नबियों में श्रेष्ठतम (अफ़ज़ल) हैं।" मिर्ज़ा साहब तावील करने में बड़े माहिर हैं। वे मौक़े के एतिबार से अपना दृष्टिकोण व मोक़िफ़ बदलते रहते हैं और यही हाल उनके माननेवालों का है कि क़ुरआन मजीद की आयतों का जैसा मतलब व भाव चाहा निकाल लिया, जिस हदीस को चाहा क़बूल कर लिया और जिसको चाहा रद्द कर दिया। नीचे हम इन कुछ अजीब-ग़रीब तावीलों का ज़िक्र करेंगे।

(1) मिर्ज़ा साहब हज़रत ईसा (अलै०) के आसमान पर उठाए जाने के क़ायल भी हैं और उनके वफ़ात के भी और कहते हैं कि जिस मरियम के बेटे ईसा का तुम इंतिज़ार कर रहे हो, जिसकी ख़बर हदीसों ने दी है, वह यही आजिज़ ग़ुलाम अहमद क़ादियानी) है।

हज़रत ईसा (अलै०) के नुज़ूल और दज्जाल के ज़ाहिर होने की अनगिनत

हदीसें बयान हुई हैं जो मिर्ज़ा साहब पर चरितार्थ (फिट) नहीं होतीं। उनको अपने पर चरितार्थ करने के लिए बेधड़क तावील कर डाली जो आज तक किसी की कल्पना व विचार में भी न आई। कहते हैं कि—"मसीह के नाज़िल होने से मुराद उनका आसमान से उतरना नहीं, बल्कि मिर्ज़ा साहब का अपने गाँव क़ादियान में पैदा होना मुराद है।"

हदीस में मसीह (अलै०) का दमिश्क़ के सफ़ेद पूर्वीय मिनारे पर उतरना आया है। मिर्ज़ा जी फ़रमाते हैं कि—"दमिश्क़ से मुराद उनका गाँव क़ादियान है और पूर्वीय मिनारे से मुराद वह मिनारा है जो मिर्ज़ा साहब के निवास करने की जगह क़ादियान के पूर्वीय किनारे पर स्थित है।" (जिसे मिर्ज़ा साहब ने अपने जीवन-काल में बनवाया।)

"हदीस में जिस दज्जाल का ज़िक्र आया है उससे मुराद शैतान और ईसाई क़ौमें हैं।"

—तावील मिर्ज़ा साहब

"हदीस में दज्जाल के जिस गधे का ज़िक्र है उससे मुराद रेलगाड़ी है।"

इसी रेलगाड़ी पर सवार होकर मिर्ज़ा साहब लाहौर जाया करते थे और मरने के बाद आपकी लाश को दज्जाल के इसी गधे पर लादकर लाया गया।

हदीस में आया है कि हज़रत ईसा (अलै०) नाज़िल होने के बाद दज्जाल को 'लुद्द' नामक स्थान पर क़त्ल करेंगे। मिर्ज़ाजी फ़रमाते हैं कि—

"लुद्द से मुराद लुधियाना है और दज्जाल के क़त्ल से मुराद 'लेखराम' का क़त्ल है।"

हदीस में आया है कि "जब हज़रत ईसा (अलै०) आसमान से उतरेंगे तो वे दो पीली चादरें पहने होंगे।" मिर्ज़ा साहब ने इसकी तावील इस प्रकार फ़रमाई—

"मसीह मौऊद दो पीली चादरों में उतरेगा, एक चादर बदन के ऊपर के हिस्से में होगी, दूसरी चादर बदन के नीचे के हिस्से में होगी। इसलिए मैंने कहा, इस ओर इशारा था कि मसीह मौऊद दो बीमारियों के साथ ज़ाहिर होगा। ताबीर के इल्म में पीले कपड़े से मुराद बीमारी है और वे दोनों बीमारियाँ मुझमें हैं। यानी एक सिर की बीमारी (दिमाग़ी रोग) दूसरी बार-बार पेशाब और दस्तों की बीमारी।"

—तज़्किरतुश्शहादतैन, पृ० 23-24

मिर्ज़ा साहब के दावे

मिर्ज़ा साहब की तावीलों की तरह उनके दावे भी अनगिनत हैं। वे एक

समय में ऐसे दावे करते नज़र आते हैं, जो एक-दूसरे के ठीक विपरीत होते हैं। दुनिया में शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति गुज़रा हो जिसने एक वक़्त में कई-कई पैंतरे बदले हैं। मिर्ज़ा साहब की नुबूवत के थैले में हर चीज़ मौजूद है। कुफ़्र भी है, ईमान भी। एक चीज़ का इक़रार भी और इनकार भी। जैसा वक़्त हुआ वैसा अपना हथियार इस्तेमाल कर लिया और अगर फँस गए तो तावील का सहारा लेकर निकल गए। उनके नज़दीक ख़त्मे नुबूवत (नुबूवत के खत्म होने) का इनकारी झूठा, दज्जाल है और ख़ुद नुबूवत का दावा भी कर रहे हैं। वह कभी ज़िल्ली व बुरूज़ी नबी बनते हैं और कभी स्थाई नबी और फिर समस्त नबियों में सर्वश्रेष्ठ बन बैठे। वे मरियम भी हैं और मरियम का बेटा भी, इमाम मेहदी भी हैं और मसीह मौऊद भी।

एक समय में हिन्दुओं को धोखा देने के लिए कृष्णजी बने और यहूदियों और ईसाइयों को अपने जाल में फँसाने के लिए मूसा और ईसा भी बने। यहूदी, ईसाई और हिन्दू तो उनके झाँसे में न आ सके, लेकिन मुसलमानों में से भोले-भाले लोग और कुछ पढ़े-लिखे नौजवान, जो उनकी कपटनीति और फ़रेबकारी से वाक़िफ़ थे, कलिमा के इक़रारी समझकर उनके जाल में फँस गए। वे ज़ाहिर में तो इस्लाम का नाम लेते रहे और परदे के पीछे उसके बुनियादी अक़ीदों पर कुदाल चलाते रहे, जिसका सिलसिला आज तक जारी है।

अल्लाह का शुक्र है—लोग ज्यों-ज्यों क़ादियानियत के इरादों से आगाह हो रहे हैं और हक़ उनपर वाज़ेह हो रहा है, त्यों-त्यों वे उनसे परहेज़ करने लगे हैं और सतर्क रहने लगे हैं और यह भी कि जो भोले-भाले लोग सादगी में आकर क़ादियानियत का शिकार हो गए थे वे उससे तौबा करके इस्लाम की ओर लौट रहे हैं।

मिर्ज़ा जी गर्भवती हो गए

मिर्ज़ा साहब फ़रमाते हैं कि मरियम की तरह ईसा की रूह मुझमें फूँकी गई और लांक्षणिक रूप में मुझे गर्भ धारण कराया गया और कई महीने के बाद जो दस महीने से ज़्यादा नहीं, इलहाम के ज़रीये से मुझे मरियम से ईसा बनाया गया। इस प्रकार से मैं मरियम का बेटा ईसा (इब्न मरियम) ठहरा।

—कश्ती-ए-नूह, पृ० 46-47, संस्करण, सन् 1902 ई०

मिर्ज़ा साहब ख़ुदा की बीवी

क़ाज़ी यार मुहम्मद साहब क़ादियानी लिखते हैं कि हज़रत मसीह मौऊद ने

एक अवसर पर अपनी यह स्थिति प्रकट की कि 'कश्फ़' (इलहाम या वह्य) की हालत आपपर इस तरह तारी हुई कि मानो आप औरत हैं और अल्लाह तआला ने अपनी पौरुष शक्ति (Sex Power) को ज़ाहिर किया। समझदारों के लिए इशारा काफ़ी है।

—ट्रैक्ट 134, इस्लामी क़ुरबानी, पृ० 12, ले० : क़ाज़ी यार मुहम्मद

लेकिन मिर्ज़ा साहब ने यह नहीं बताया कि ख़ुदा ने उनके साथ पौरुष शक्ति का प्रदर्शन किस ओर से किया (अल्लाह की पनाह)। शायद मिर्ज़ा साहब को भ्रम हो गया होगा। मिर्ज़ा साहब को कश्फ़ के ज़रीये जो कुछ महसूस हुआ वह शैतानी हयूला होगा, वरना अल्लाह तआला की ज़ात उन ऐबों से पाक व साफ़ है जो शिर्क करनेवाले उससे जोड़ते हैं।

मिर्ज़ा जी की भविष्यवाणियाँ

मिर्ज़ा जी के निकट भविष्यवाणियों की हैसियत

मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद साहब कहते हैं—

"मुमकिन नहीं कि ख़ुदा की भविष्यवाणी (पेशीनगोई) में कोई वादाख़िलाफ़ी हो।" —चश्म-ए-मारफ़त, पृ० 12, प्रकाशित सन् 1908 ई०

"हमारी सच्चाई या झूठ जाँचने के लिए हमारी भविष्यवाणी से बढ़कर कोई इम्तिहान (कसौटी) नहीं।" —आईन-ए-कमालात, पृ० 231, प्रकाशित 1893 ई०

"इसी लिए हम, बल्कि हर समझदार व्यक्ति यह कहने में हक़दार है कि जिस इलहाम के दावेदार व्यक्ति की कोई भविष्यवाणी ग़लत साबित हो जाए, वह ख़ुदा का मुलहम[1] और मुख़ातब[2] नहीं, बल्कि अल्लाह पर झूठ घड़नेवाला है, क्योंकि मुमकिन नहीं कि नबियों की भविष्यवाणियाँ टल जाएँ।" —कश्ती-ए-नूह, पृ० 5

मानो मिर्ज़ा साहब की सच्चाई व झूठ मालूम करने के लिए पहला और सबसे बड़ा सबूत उनकी भविष्यवाणियाँ (पेशीनगोइयाँ) हैं। अत: नीचे हम मिर्ज़ा साहब की कुछ मशहूर भविष्यवाणियाँ पेश करते हैं। भविष्यवाणियों के बारे में ख़ुद मिर्ज़ा साहब के बयान किए गए मेयार (कसौटी) को सामने रखते हुए पाठकगण मिर्ज़ा साहब के सच्चा या झूठा होने का ख़ुद ही फ़ैसला करें।

अब्दुल्लाह आथम की मौत की भविष्यवाणी

मिर्ज़ा साहब ने जब मसीह मौऊद होने का दावा किया तो ईसाइयों से ख़ूब मुनाज़िराबाज़ी (शास्त्रार्थ) हुई। स्थिति गाली-गलौच, इश्तेहारबाज़ी और मुक़द्दमेबाज़ी तक जा पहुँची। उन समस्त मोर्चों में सबसे अधिक मशहूर घटना अब्दुल्लाह आथम पादरी की है। मिर्ज़ा साहब ने उससे शास्त्रार्थ किया और फिर यह भविष्यवाणी की कि वह अमुक तिथि तक मर जाएगा। चुनाँचे मिर्ज़ा साहब जंगे मुक़द्दस, पृष्ठ 188-189, प्रकाशित सन् 1893 ई० में लिखते हैं—

"मैं इस वक़्त इक़रार करता हूँ कि अगर यह भविष्यवाणी (पेशीनगोई) झूठी निकली, यानी वह पक्ष जो ख़ुदा के नज़दीक झूठ पर है—वह पन्द्रह महीने की

1. जिसपर इलहाम होता हो।
2. जिसे संबोधित किया जाए।

मुद्दत में आज की तारीख़ से सज़ा के तौर पर मौत की दोज़ख़ में न पड़े तो मैं हर एक सज़ा उठाने को तैयार हूँ। मुझको बेइज़्ज़त किया जाए और रुसवा किया जाए, मेरे गले में रस्सा डाल दिया जाए, मुझको फाँसी दी जाए—हर एक बात के लिए तैयार हूँ और मैं अल्लाह जल-ल शानहू की क़सम खाकर कहता हूँ कि ज़रूर ऐसा ही करेगा, ज़रूर करेगा, ज़रूर करेगा। ज़मीन व आसमान तो टल जाएँ पर उसकी बातें न टलेंगी।"

अब्दुल्लाह आथम, भविष्यवाणी की आख़िरी तारीख़ तिथि 5 सितम्बर, सन् 1894 ई० तक सही व सलामत ज़िन्दा रहा। क़ादियानियों के चेहरों का रंग उड़ गया। पहली भविष्यवाणी के ग़लत होने का रंज व दुख, दूसरे ग़ैरों के तानों और ज़िल्लत व रुसवाई का ग़म। क़ादियान में सारी रात कुहराम मचा रहा, लोग चीख़-चीख़कर नमाज़ों में रोते रहे और दुआएँ करते रहे—"या अल्लाह आथम को मार दे, या अब्दुल्लाह आथम को मार दे, ऐ जगत् के पालनहार हमें रुसवा न कीजिए।" —लोगों को यक़ीन था कि आज सूरज अस्त नहीं होगा कि आथम मर जाएगा। मगर जब सूरज डूब गया तो क़ादियानियों के दिल काँपने लगे। रहीम बख़्श एम०ए० अपने पिता मास्टर क़ादिर बख़्श से बयान करते हैं—"उस वक़्त मुझे कोई घबराहट नहीं थी, हाँ फ़िक्र और हैरानी ज़रूर थी, लेकिन जिस वक़्त हुज़ूर (मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद) ने तक़रीर की और आज़माइश की हक़ीक़त बताई तो तबीअत मगन हो गई और दिल को मुकम्मल इतमीनान हो गया और ईमान ताज़ा हो गया। मास्टर क़ादिर बख़्श साहब यह भी बयान करते हैं कि मैंने अमृतसर जाकर अब्दुल्लाह आथम को ख़ुद देखा। ईसाई उसे गाड़ी में बिठाए हुए बड़ी धूम-धाम से बाज़ारों में लिए फिरते थे, लेकिन उसे देखकर यह समझ गया कि हक़ीक़त यह मर गया है और सिर्फ़ इसका जनाज़ा लिए फिरते हैं। आज नहीं तो कल मर जाएगा।"

—अल-हकम क़ादियान, भाग-25, पृ० 34, दिनांक 7 सितम्बर, सन् 1923 ई०

जब विरोधियों ने शोर मचाया और लानत व मलामत की कि मिर्ज़ा साहब की आथम के बारे में भविष्यवाणी पूरी न हुई और आथम सही-सलामत ज़िन्दा है, तो मिर्ज़ा साहब ने इसकी यह तावील पेश की—

"चूँकि आथम ने अपने दिल में इस्लाम क़बूल कर लिया, इसलिए नहीं मरा।"

इसपर आथम ने ख़त लिखा जो अख़बार "वफ़ादार" माह—सितम्बर, सन् 1894 ई० में प्रकाशित हुआ।

"मैं ख़ुदा के फ़ज़्ल से ज़िन्दा और सलामत हूँ। मैं आपकी तवज्जोह किताब

'नुज़ूल मसीह' पृ० 81-82 की ओर दिलाना चाहता हूँ जो मेरे संबंध और अन्य साथियों की मौत के सबंध में भविष्यवाणी है, इससे शुरू करके जो कुछ गुज़रा उनको मालूम है। और मिर्ज़ा साहब कहते थे कि 'आथम ने इस्लाम क़बूल कर लिया इसलिए मैं नहीं मरा।' ख़ैर उनको इख़तियार है जो चाहें सो तावील करें। कौन किसको रोक सकता है। मैं दिल से और ज़ाहिर से भी ईसाई था और अब भी ईसाई हूँ। इसपर ख़ुदा का शुक्र अदा करता हूँ।"

जब आथम का देहांत हो गया तो क़ादियानी शोर मचाने लगे। कुछ नादान कहते हैं कि आथम अपनी मियाद में नहीं मरा, लेकिन वे जानते हैं कि मर तो गया। मियाद और ग़ैर मियाद की मुद्दत फ़ुज़ूल है, अंततः मर तो गया। (मानो कि अगर मिर्ज़ा क़ादियानी की भविष्यवाणी न होती तो आथम न मरता, हरगिज़ न मरता और कभी न मरता !)

मौऊद के बेटे की भविष्यवाणी

सन् 1886 ई० में मिर्ज़ा साहब की बीवी गर्भवती थी, उस समय उन्होंने यह भविष्यवाणी की—

"ख़ुदावन्द करीम (अल्लाह तआला) ने जो हर चीज़ पर क़ुदरत रखता है, मुझको अपने इलहाम से बताया कि मैं तुझे एक रहमत का निशान देता हूँ। ख़ुदा ने कहा, ताकि दीने इस्लाम का शर्फ़ (श्रेष्ठता), कलामुल्लाह का मर्तबा लोगों पर ज़ाहिर हो, ताकि लोग समझें कि मैं क़ादिर हूँ। जो चाहता हूँ करता हूँ, ताकि वे यक़ीन लाएँ कि मैं तेरे साथ हूँ और ताकि उन्हें जो ख़ुदा, ख़ुदा के दीन, उसकी किताब, उसके रसूल को इनकार की निगाह से देखते हैं, एक खुली निशानी मिले—एक ख़ूबसूरत और पाक लड़का तुझे दिया जाएगा। वह तेरे ही नुत्फ़े (शुक्राणु), तेरी ही नस्ल से होगा। ख़ूबसूरत, पाक लड़का तुम्हारा मेहमान आता है। उसका नाम बशीर भी है। मुबारक वह जो आसमान से आता है, उसके साथ फ़ज़्ल (कृपा) है। वह बहुतों को बीमारियों से साफ़ करेगा। भौतिक ज्ञान और आध्यात्मिक ज्ञान से परिपूर्ण किया जाएगा। वह तीन को चार करनेवाला है।"

—मुलख़्ख़स इश्तेहार, 20 फ़रवरी सन् 1886 ई० अंकित : तबलीग़े रिसालत, भाग-1, पृ० 58

इस इश्तेहार में जिस ज़ोर व शोर के साथ उपरोक्त लड़के की भविष्यवाणी करते हुए उसे इस्लाम का ख़ुदा और ख़ुदा का रसूल और ख़ुद मिर्ज़ा के साहिबे इलहाम होने, बल्कि ख़ुदा तआला के क़ादिर व ताक़तवर होने की ज़बरदस्त

दलील बताया गया है, वह व्याख्या की मुहताज नहीं है। किन्तु अफ़सोस कि इस गर्भ से मिर्ज़ा साहब के घर लड़की पैदा हुई, इसपर अफ़सोस यह कि इसके बाद मिर्ज़ा साहब के यहाँ कोई लड़का ऐसा नहीं हुआ जिसे मिर्ज़ा साहब ने इस भविष्यवाणी का मिस्दाक़ (चरितार्थ) ठहराया हो और वह ज़िंदा रहा हो, या ख़ुद मिर्ज़ा साहब ने उसके मुसलेह मौऊद होने का अमलन या ज़बानी इक़रार किया हो।

लेकिन मिर्ज़ा साहब अपने बयानों में स्पष्ट कर चुके थे कि जल्दी ही उस लड़के की पैदाइश होनेवाली है जिसकी शुभ-सूचना दे रहे थे, लेकिन लड़की के पैदा होने पर पूरी ढिठाई से यह कहकर गुज़र गए कि मैंने कब कहा था कि लड़का इस गर्भ से पैदा होगा।

मुबारक अहमद के बारे में भविष्यवाणी

मिर्ज़ा साहब का चौथा लड़का मुबारक अहमद एक बार बीमार पड़ा, उसके बारे में अख़बार 'बद्र' 29 अगस्त, सन् 1887 ई०, पृ० 4 पर लिखा गया—

"मियाँ मुबारक साहब जो सख़्त बीमार हैं और कभी-कभी बेहोशी तक की नौबत पहुँच जाती है और अभी तक बीमार हैं, उनके संबंध में आज इलहाम हुआ है : क़बलू हो गई, नौ दिन का बुख़ार टूट गया। यानी यह दुआ क़बूल हो गई कि अल्लाह तआला, मियाँ साहब मौसूफ़ को रोग मुक्त करे।"

उस सख़्त बीमारी में जो मायूसकुन (निराशाजनक) थी मिर्ज़ा साहब ने जो दुआ माँगी वह यही हो सकती है कि ख़ुदा उसे मुकम्मल सेहत दे और मेरी दी हुई ख़बरें सच्ची साबित कर दे। उस लड़के के बारे में मिर्ज़ा साहब ने फ़रमाया था—मुसलेह मौऊद, बीमारों को सेहत देनेवाला, क़ैदियों को रास्तगारी बख़्शनेवाला, लम्बी उम्र पानेवाला, जीत और कामयाबी की कुँजी, निकटता व दयालुता का निशान, रौब व बड़ाई और दौलत ज़मीन के किनारों तक। मिर्ज़ा साहब की दुआएँ जो अल्लाह की बारगाह में क़बूल व मक़बूल हुईं। ज़मीन के किनारों तक शुहरत पानेवाला, क़ौमों को बाबरकत करनेवाला, मानो ख़ुदा आसमान से उतर आया, आदि महान गुणोंवाला मालिक बनाया था।

यह भविष्यवाणी (पेशीनगोई) बिलकुल झूठी साबित हुई जिसमें मियाँ मुबारक की सेहत की ख़बर दी गई थी।

साहबज़ादा मियाँ मुबारक साहब सेहतमंद न हुए, उनके उम्र का पैमाना भर चुका था। सिर्फ़ ठोकर की कसर थी। मिर्ज़ा साहब इस बच्चे के बारे में

समय-समय पर इलहाम सुनाते रहे, ताकि लोगों को तसल्ली हो। अल्लाह तआला ने अस्थाई रूप से सेहत का रंग और फिर बीमारी का ग़लबा दिखाकर 16 सितम्बर सन् 1887 ई० को मौत से दोचार कर दिया और मिर्ज़ा साहब की भविष्यवाणियाँ धरी की धरी रह गईं।

क़ादियान में प्लेग

सन् 1902 ई० में भारत के अनेक प्रांतों में प्लेग फैल गया। बहुत-से शहर और क़स्बे इसकी लपेट में आ गए। अभी इस महामारी की शुरुआत ही थी, मिर्ज़ा साहब ने अनेक भविष्यवाणियाँ (पेशीनगोइयाँ) करनी शुरू कर दीं। धीरे-धीरे यह मर्ज़ ज़ोर पकड़ता गया, लेकिन क़स्बा क़ादियान अभी तक सुरक्षित था और वहाँ इस महामारी के कोई लक्षण नज़र नहीं आ रहे थे। मिर्ज़ा साहब ने इस स्थिति से लाभ उठाते हुए प्रोपगेंडा शुरू कर दिया कि चूँकि मिर्ज़ा साहब की नुबूवत को झुठलाया जा रहा है, इसलिए अल्लाह तआला ने यह अज़ाब (प्रकोप) भेजा है और क़ादियान चूँकि मिर्ज़ा साहब की रिहाइशगाह और उनकी नुबूवत का केन्द्र है इसलिए वहाँ अज़ाब नहीं आया और न आएगा, बल्कि कोई बाहर का आदमी क़ादियान में आ जाए तो वह भी इस ईश्वरीय प्रकोप से बचा रहेगा। और बढ़कर यह दावा किया कि जिन-जिन बस्तियों में मिर्ज़ा साहब के मुरीद (अनुयायी) मौजूद हैं, वे सारे मक़ाम और वहाँ के बाशिन्दे इस महामारी से सुरक्षित रहेंगे। आपने बड़े भरोसे और यक़ीन के साथ यह दावा किया :

"जहाँ एक भी सच्चा क़ादियानी होगा, उस जगह को ख़ुदा तआला हर ग़ज़ब व मुसीबत से बचा लेगा।"

आगे फ़रमाते हैं—

"(ऐ विरोधियो!) तुम लोग भी मिलकर ऐसी भविष्यवाणी करो, जिनसे क़ादियान के पैग़म्बर का दावा झूठा हो जाए और उसकी दो ही सूरते हैं—या यह कि लाहौर और अमृतसर ताऊन (महामारी प्लेग) के हमले से सुरक्षित रहें या यह कि क़ादियान ताऊन में ग्रस्त हो जाए। ख़ुदा ने इस अकेले सादिक़[1] (यानी मिर्ज़ा गुलाम अहमद) के तुफ़ैल क़ादियान को, जिसमें तरह-तरह के लोग बसते हैं, अपनी ख़ास हिफ़ाज़त में ले लिया।" —इलहामाते मिर्ज़ा, पृ० 109, 112, 113

मिर्ज़ा साहब के इस प्रोपगेंडा ने ताऊन (प्लेग) से डरे और सहमे हुए लोगों

1. निहायत सच्चा।

को क़ादियानियत की ओर खींचने में बड़ा काम किया। इसी दौरान उन्होंने एक किताब लिखी जिसका नाम—"कश्ती-ए-नूह" रखा जिससे यह बताना मक़सूद था कि जो कोई मेरी नुबूवत को तसलीम करेगा, वह इस कश्ती में सवार होकर तूफ़ाने नूह की तरह इस अज़ाब से सुरक्षित रहेगा।

लेकिन जगत के पालनहार अल्लाह तआला को कुछ और ही मंज़ूर था। उसने इस झूठ की कलई खोलने का ख़ास प्रबंध किया, यानी उसी प्लेग (महामारी) की चपेट में मिर्ज़ा गुलाम अहमद क़ादियानी को ले लिया। प्लेग क़ादियान और उसके सभी इलाक़ों में भी फैल गया। मिर्ज़ा जी के घमंडपूर्ण और ऊँचे दावों के बावजूद प्लेग ने क़ादियान की सफ़ाई शुरू कर दी।

दिसम्बर सन् 1902 ई० का इज्तिमा (सभा) सिर्फ़ ताऊन (प्लेग) की वजह से स्थगित करना पड़ा। फिर मई सन् 1904 ई० में क़ादियानी स्कूल ताऊन की वजह से बंद करना पड़ा। ताऊन की तीव्रता व भयंकरता का यह हाल था कि लोग परेशानी के आलम में इधर-उधर भाग रहे थे, लोगों ने अपने घर छोड़कर खेतों में डेरे लगाए थे। क़ादियान का सारा क़स्बा उजड़ा हुआ नज़र आता था, जैसे अज़ाबे इलाही से तबाह की हुई बस्तियाँ। मतलब यह कि ताऊन से क़ादियान के बचे रहने की भविष्यवाणी भी झूठ निकली। जो मिर्ज़ा जी के कथनानुसार ख़ुद उनके झूठा होने की खुली हुई दलील है।

मिर्ज़ा साहब की हसरत जो दिल ही दिल में रह गई

मिर्ज़ा साहब के क़रीबी रिश्तेदारों में एक अहमद बेग होशियारपुरी थे जिनकी एक नौउम्र बच्ची मुहम्मदी बेगम थी। इस बच्ची से निकाह की ख़्वाहिश मिर्ज़ा साहब ने दिल ही दिल में पाल ली और दावा किया कि मुहम्मदी बेगम से उनका निकाह होना एक ख़ुदाई इलहाम के मुताबिक़ है, जो होकर रहेगा।

अहमद बेग (मुहम्मदी बेगम के पिता) अपने एक घरेलू काम से मिर्ज़ा साहब के पास गए। उस समय तो मिर्ज़ा साहब ने उनको यह कहकर टाल दिया कि हम कोई काम बिना इस्तिख़ारा के और अल्लाह की मर्ज़ी मालूम किए बिना नहीं करते। कुछ दिन बाद मिर्ज़ा साहब ने इस सुलूक और मुरव्वत का बदला इस प्रकार दिया कि उनकी बड़ी बेटी मुहम्मदी बेगम का रिश्ता अपने लिए माँगा। उस समय मिर्ज़ा साहब की उम्र पच्चास साल की थी।

उसने न सिर्फ़ बड़ी नफ़रत से मिर्ज़ा साहब के इस मुतालबे को ठुकराया और

उसके दिल में मिर्ज़ा साहब की जो रही-सही इज़्ज़त थी वह भी ख़ाक में मिल गई, बल्कि अहमद बेग ने मिर्ज़ा साहब का रिश्तावाला ख़त अख़बारों में प्रकाशित करा दिया। चूँकि इस ख़त की इबारत का संबंध भविष्यवाणी से था, इसलिए वह नीचे दिया जा रहा है।

"ख़ुदा तआला ने अपने कलाम पाक से मेरे ऊपर ज़ाहिर किया है कि अगर आप अपनी बड़ी बेटी का रिश्ता मेरे साथ मंज़ूर न करेंगे तो आपके लिए दूसरी जगह करना हरगिज़ मुबारक न होगा और इसका अंजाम दर्द, तकलीफ़ और मौत होगा। ये दोनों तरफ़ बरकत और मौत की ऐसी हैं कि जिनको आज़माने के बाद मेरी सच्चाई या झूठ मालूम हो सकता है।"

—आईन-ए-कमालात, पृ० 179, 280; अख़बार नूर अफ़शाँ, 10 मई, सन् 1888 ई०

अपने इस ख़ुदाई दावे का ज़िक्र मिर्ज़ा साहब ने इस प्रकार किया—

"उस ख़ुदाए क़ादिरुल मुत्लक़ (सर्वशक्तिमान, संप्रभु ख़ुदा) ने मुझे फ़रमाया कि उस व्यक्ति (मिर्ज़ा अहमद बेग) की बड़ी बेटी (मुहम्मदी बेगम) के निकाह के लिए रिश्ता भेज और उनको कह दे कि तमाम सुलूक व मुरव्वत तुमसे इसी शर्त से किया जाएगा और यह निकाह तुम्हारे लिए बरकत का सबब और एक रहमत का निशान होगा और उन तमाम रहमतों और बरकतों से हिस्सा पाओगे जो इश्तेहार 22 फ़रवरी सन् 1888 ई० में अंकित हैं, लेकिन अगर निकाह से इनकार किया तो उस लड़की का अंजाम बहुत ही बुरा होगा और जिस किसी दूसरे व्यक्ति से ब्याही जाएगी वह निकाह के रोज़ से ढाई साल तक, और ऐसा ही उस लड़की के पिता की तीन साल के अन्दर मृत्यु हो जाएगी और उनके घर में फूट और तंगी और मुसीबत पड़ेगी और बीच के समय में भी उस लड़की के लिए कई अप्रिय और ग़म के मामले पेश आएँगे।"

—तबलीग़े रिसालत, भाग-1, पृ० 155-166, मजमूआ इश्तेहरात, भाग-1, पृ० 157-158

मिर्ज़ा साहब की यह भविष्यवाणी भी सरासर झूठ और ग़लत साबित हुई। जिस भविष्यवाणी को मिर्ज़ा साहब ने अपने सच और झूठ की कसौटी बनाया था, उसका अंजाम बिलकुल खुलकर सामने आ गया। चाहिए तो यह था कि मिर्ज़ा साहब अपने कहने के मुताबिक़ भविष्यवाणी के ग़लत साबित हो जाने पर तौबा करके उम्मते मुहम्मदिया का तरीक़ा अपना लेते, लेकिन यह उनकी क़िस्मत में न

था। घटनाओं का ग़लत अर्थ निकालकर और ग़लत तावीलों का सहारा लेकर अपने आपको और अपने मुरीदों को मुतमइन करते रहे।

ख़ुशनसीब रही कमउम्र मुहम्मदी बेगम जिसको अल्लाह तआला ने पचास साला व्यक्ति की सोहबत की तकलीफ़ से बचा लिया, जो दुनिया में कई ख़तरनाक मर्ज़ का शिकार था और सौतन की मौजूदगी में परेशानी और तंगी की ज़िन्दगी गुज़ारनी पड़ती और मिर्ज़ा साहब की मौत के बाद एक लम्बा समय बेवगी के कष्ट बर्दाश्त करने पड़ते और आख़िरत की मार इन सब कष्ट व तकलीफ़ों से बढ़कर होती। इसके विपरीत मुहम्मदी बेगम ने अपने शौहर सुलतान मुहम्मद के साथ पूरी उम्र जब तक जीवित रहीं ख़ुशहाली के साथ शांतिमय जीवन व्यतीत किया, जो कम ही लोगों को नसीब होता है। सुलतान मुहम्मद एक तंदुरुस्त, सेहतमंद और ख़ूबसूरत नौजवान था और फ़ौज के एक अच्छे पद पर फ़ाइज़ था। उसके एक दोस्त सैयद मुहम्मद शरीफ़ साहब, जो ग्राम घड़ियाला, ज़िला लायलपुर के निवासी थे, ने उसके हालात सन् 1930 ई० में मालूम किए तो उसने जवाब में लिखा—

"अस्सलामु अलैकुम,

मैं अल्लाह के फ़ज़्ल से यह ख़त लिखने तक तंदुरुस्त और बख़ैर हूँ। अल्लाह के फ़ज़्ल से फ़ौजी मुलाज़मत के वक़्त भी तंदुरुस्त रहा। मैं इस समय रिसालदारी पद के पेंशन पर हूँ। एक सौ पैंतीस रुपए मासिक पेंशन मिलती है। सरकार की ओर से पाँच मुरब्बा ज़मीन मिली हुई है। क़सबा पट्टी में मेरी पैतृक भूमि भी मेरे हिस्से में आई है, जो लगभग सौ बीघा है। ज़िला शेख़ूपुर में भी तीन मुरब्बा ज़मीन है। मेरे छः लड़के हैं, जिनमें से एक लायलपुर में पढ़ता है। सरकार की ओर से उसको पचपन रुपए मासिक वज़ीफ़ा मिलता है। दूसरा लड़का पट्टी में शिक्षा प्राप्त कर रहा है। मैं अल्लाह के फ़ज़्ल से अहले सुन्नत वल् जमाअत हूँ। मैं अहमदी (क़ादियानी) मज़हब को बुरा समझता हूँ। उसका अनुयायी नहीं हूँ। उसका धर्म झूठा समझता हूँ।

—वस्सलाम

ताबेदार

सुलतान बेग (पेंशनर)

मक़ाम : पट्टी, ज़िला : लायलपुर

मतबुआ अहले हदीस, 14 नवम्बर, सन् 1930 ई०

मिर्ज़ा जी की आख़िरी दुआ और मौलाना सनाउल्लाह अमृतसरी से आख़िरी फ़ैसला

मौलाना मुहम्मद हुसैन बटालवी और उनके साथियों की तरह मुनाज़िरे इस्लाम हज़रत मौलाना अबुल वफ़ा सनाउल्लाह अमृतसरी (रह०) मिर्ज़ा गुलाम अहमद क़ादियानी को झुठलाने और उनके मुक़ाबिले के लिए हर वक़्त तैयार रहते थे। मौलाना सनाउल्लाह अमृतसरी ने मिर्ज़ाइयों से हर मैदान में मुक़ाबिला किया और उनको हमेशा भारी शिकस्त दी और उनकी झूठी नुबूवत की बुनियादें हिलाकर रख दीं। मिर्ज़ा साहब और उनके साथी मौलाना (रह०) से बहुत ज़्यादा तंग आ गए थे। उनका जीना दूभर हो चुका था। अपना सब कुछ बरबाद होते देखकर मिर्ज़ा जी ने आख़िरी बाज़ी लगा दी। उन्होंने अख़बारों में एक फ़रेब और धोखे से भरा इश्तेहार दिया जो 'अख़बार अहले हदीस' अमृतसर, तारीख़ 26 अप्रैल, सन् 1907 ई० के अंक में प्रकाशित हुआ, जो नीचे दिया जा रहा है। मौलाना को संबोधित करते हुए लिखा—

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

(अल्लाह के नाम से जो रहमान व रहीम है।)

नह्मदुहू व नुसल्लि अला रसूलिहिल-करीम

व यस्तम्बिऊ-न-क अ-हक़्क़ुन हु-व

(वे तुमसे चाहते हैं कि उन्हें ख़बर दो कि क्या वह वास्तव में हक़ है ?)

क़ुल इय् व रब्बीय् अन्न-हू ल-हक़्क़ुन

(कह दो : हाँ, मेरे रब की क़सम वह बिलकुल हक़ है)

ख़िदमत में,

मौलवी सनाउल्लाह !

अस्सलामु अला मनित्तबअल हुदा[1]

मुद्दत से आपकी पत्रिका "अहले हदीस" में मुझे झुठलाने और गुमराह साबित करने का सिलसिला जारी है। मुझे आप अपनी इस पत्रिका में झूठा, दज्जाल, फ़सादी के नाम से मंसूब करते हैं और दुनिया में मेरे बारे में प्रचार करते हैं कि यह व्यक्ति धूर्त, झूठा और दज्जाल है और इस व्यक्ति का दावा मसीह मौऊद होने का सरासर झूठ है। मैंने आपसे बहुत दुख उठाया और सब्र करता रहा, किन्तु चूँकि मैं देखता हूँ कि मैं हक़ के फैलाने पर तैनात हूँ और आप बहुत से झूठे आरोप मेरे ऊपर लगाकर दुनिया को मेरी ओर आने से रोकते हैं और मुझे उन गलियों और तोहमतों और उन शब्दों से याद करते हैं कि जिनसे बढ़कर कोई अपशब्द नहीं हो सकता। अगर मैं ऐसा ही झूठा और फ़रेबी हूँ, जैसा कि प्रायः आप अपने हर एक अंक में मुझे याद करते हैं, तो मैं आपकी ज़िन्दगी में हलाक (मृत्यु को प्राप्त) हो जाऊँ। क्योंकि मैं जानता हूँ कि फ़सादी और महाझूठे की बहुत उम्र नहीं होती, अंततः वह ज़िल्लत और हसरत के साथ अपने सख़्त दुश्मन की ज़िन्दगी में ही नाकाम, हलाक हो जाता है और उसका हलाक होना ही बेहतर होता है, ताकि ख़ुदा के बंदों को तबाह न करे और अगर मैं झूठा व फ़रेबी नहीं हूँ और ख़ुदा से बातचीत और संबोधन का सौभाग्य मुझे प्राप्त है और मसीह मौऊद हूँ तो ख़ुदा की दयालुता से उम्मीद करता हूँ कि आप अल्लाह की सुन्नत के मुताबिक़ हक़ के झुठलानेवालों की सज़ा से बच नहीं सकेंगे। अतः यदि वह सज़ा जो इनसान के हाथों से नहीं, बल्कि केवल ख़ुदा के हाथों से है, जैसे—ताऊन व हैज़ा आदि घातक बीमारियाँ आप पर मेरी ज़िन्दगी में ही घटित न हुई तो मैं ख़ुदा की ओर से नहीं। यह किसी वह्य या इलहाम की बुनियाद पर कोई भविष्यवाणी नहीं, बल्कि सिर्फ़ दुआ के तौर पर मैंने ख़ुदा से फ़ैसला चाहा है और मैं ख़ुदा से दुआ करता हूँ कि मेरे मालिक सर्वदृष्टा व सर्वसमर्थ्य जो सर्वज्ञ व सर्वज्ञाता है, जो मेरे दिल की हालत से अच्छी तरह वाक़िफ़ है, अगर यह दावा मसीह मौऊद होने का केवल मेरे मन का धोखा और मनघड़त है और मैं तेरी नज़र में फ़सादी और महाझूठा हूँ और दिन-रात धोखा करना और झूठ घड़ना मेरा काम है, तो ऐ मेरे प्यारे मालिक ! मैं आज़िजी (विनम्रता) से दुआ करता हूँ कि मौलवी सनाउल्लाह साहब की ज़िन्दगी में मुझे हलाक कर दे और मेरी मौत से उनको और उनकी जमाअत को ख़ुश कर दे (आमीन)। मगर ऐ मेरे कामिल और सच्चे ख़ुदा ! अगर मौलवी सनाउल्लाह उन तोहमतों में जो मुझपर लगाता है हक़ पर नहीं, तो मैं सविनय तेरी शरण में दुआ करता हूँ कि मेरी ज़िन्दगी में ही उनको तबाह कर, मगर न इनसानी हाथों से, बल्कि ताऊन व हैज़ा आदि घातक मर्ज़ों से, सिवाए इस स्थिति के कि वह खुले तौर पर मेरे रूबरू और मेरी जमाअत के सामने उन तमाम गलियों और बदनामियों से तौबा करे, जिनको

1. यानी सलाम उसपर जो हिदायत की पैरवी करे। सलाम के ये शब्द ग़ैर मुसलिमों को सम्बोधित करते समय प्रयोग किए जाते हैं। मौलाना सनाउल्लाह साहब को शायद मिर्ज़ा ग़ैर मुसलिम ही समझते थे।

अपना अनिवार्य कर्त्तव्य समझकर हमेशा मुझे दुख पहुँचाता है। (ऐसा ही हो ऐ सर्व जगत् के पालनहार)। मैं इनके हाथों बहुत सताया गया और सब्र करता रहा, किन्तु, अब मैं देखता हूँ कि इनकी बदज़बानी हद से गुज़र गई। मुझे उन चोरों और डाकुओं से भी बदतर जानते हैं, जिनका वुजूद दुनिया के लिए अत्यंत हानिकारक होता है और इन्होंने आरोपों और अपशब्दों में—'ला तक़्फ़ु मा लै-स ल-क बिही इल्मु' (यानी जिस चीज़ का तुम्हें ज्ञान न हो उसके पीछे न लगो) पर भी अमल नहीं किया और तमाम दुनिया से मुझको बदतर जानता है और दूर-दूर मुल्कों तक मेरे बारे में यह प्रचार कर दिया कि यह व्यक्ति वास्तव में ख़ुदा का बाग़ी, ठग और दुकानदार और झूठा और गुमराह और बहुत ही बुरा आदमी है। अतः यदि ऐसे शब्द, हक़ के चाहनेवालों पर ग़लत असर डालते तो मैं उन तोहमतों पर सब्र करता रहा, मगर मैं देखता हूँ कि मौलवी सनाउल्लाह इन्हीं तोहमतों के ज़रीये से इस सिलसिले को खत्म करना चाहता है और उस इमारत को ध्वस्त करना चाहता है जो तूने मेरे आक़ा और मेरे भेजनेवाले अपने हाथ से बनाई है। इसलिए अब मैं तेरे ही तक़द्दुस और रहमत का दामन पकड़कर तेरे सामने दुआ करता हूँ कि मुझमें और सनाउल्लाह में सच्चा फ़ैसला कर और वह जो तेरी निगाह में हक़ीक़त में फ़सादी और महाझूठा है उसको सच्चे की ही ज़िन्दगी में दुनिया से उठा ले या किसी और बड़ी आफ़त में जो मौत के बराबर हो सकती है (में ग्रस्त) कर। ऐ मेरे आक़ा! प्यारे मालिक, तू ऐसा ही कर (आमीन सुम्मा आमीन)। अंततः मौलवी साहब से निवेदन है कि वह मेरे इस लेख को अपनी पत्रिका में प्रकाशित कर दें और जो चाहें इसके नीचे लिख दें और अब फ़ैसला ख़ुदा के हाथ है।

—लेखक : अब्दुल्लाह अहमद मिर्ज़ा गुलाम अहमद क़ादियानी मसीह मौऊद, आफ़ाउल्लाहो व वालिदहू, दिनांक एक रबीउल अव्वल 25 हि०, 15 अप्रैल, सन् 1907 ई०

मिर्ज़ा साहब की यह दुआ अल्लाह की बारगाह में मक़बूल हुई। मिर्ज़ा साहब हैज़ा के मर्ज़ में ग्रस्त होकर शिक्षाप्रद स्थिति में इस संसार से विदा हो गए और मुनाज़िरे इस्लाम मौलाना अबुल वफ़ा सनाउल्लाह अमृतसरी (रह०) एक लम्बी मुद्दत तक सकुशल जीवित रहे और क़ादियानियत की सरकूबी में व्यस्त रहे। मिर्ज़ा साहब की मौत के लगभग चालीस साल बाद आपने वफ़ात पाई।

क़ादियानी लोग मुसलमानों को क्या समझते हैं?

क़ादियानी, जिनकी बुनियाद ही झूठ पर है, झूठ बोलने में बड़े माहिर हैं। वे इस बात का ढिंढोरा बड़े ज़ोर-शोर से पीटते हैं कि उनकी कोशिश से सैकड़ों लोग इस्लाम में दाख़िल हुए। जबकि उनकी कोशिशों का असल निशाना मुसलिम समाज है। भोले-भाले नावाक़िफ़ मुसलमानों को मुसलमान मानने के लिए तैयार नहीं। ग़ैर मुसलिम भाइयों में भी ये क़ादियानी अपने को बहुत निर्दोष और पीड़ित बनकर यह जताने की कोशिश करते हैं कि ये मुसलमान हमपर ज़ुल्म कर रहे हैं और हमें मुसलमान मानने को तैयार नहीं और हमारे ग़ैर मुसलिम भाई भी बहुत जल्द उनके फ़रेब का शिकार होकर उनकी हिमायत के लिए तैयार हो जाते हैं, जबकि क़ादियानी अपने असल इरादों व संकल्पों को छिपाए रखते हैं जो मुसलमानों के बारे में वे अपने दिलों में रखते हैं। नीचे हम उन अक़ीदों का उल्लेख करेंगे जो वे ग़ैर क़ादियानी यानी मुसलमानों के बारे में रखते हैं।

ग़ैर क़ादियानियों के बारे में मिर्ज़ा जी का बयान

मिर्ज़ा जी बयान करते हैं—

"जो व्यक्ति मेरी पैरवी नहीं करेगा और मेरी जमाअत में दाख़िल नहीं होगा, वह ख़ुदा और रसूल की नाफ़रमानी करनेवाला जहन्नमी है।"

—तबलीग़ रिसालत, पृ० 27, भाग-9

रंडियों की औलाद

"मेरी इन किताबों को हर मुसलमान मुहब्बत की नज़र से देखता है और उसके इल्म से फ़ायदा उठाता है और मेरी दावत के हक़ होने की गवाही देता है और इसे क़बूल करता है। किन्तु रंडियों (व्यभिचारिणी औरतों) की औलाद मेरे हक़ होने की गवाही नहीं देती।"

—आईन-ए-कमालाते इस्लाम, पृ० 548, ले० : मिर्ज़ा गुलाम अहमद, प्रकाशित सन् 1893 ई०

हरामज़ादे

"जो हमारी जीत (फ़तह) का क़ायल नहीं होगा, समझा जाएगा कि उसको हरामी (अवैध संतान) बनने का शौक़ है और हलालज़ादा (वैध संतान) नहीं है।"

—अनवारे इस्लाम, पृ० 30, ले० : मिर्ज़ा गुलाम अहमद क़ादियानी, प्रकाशित सन् 1894 ई०

मर्द सुअर और औरत कुतियाँ

"मेरे विरोधी जंगलों के सुअर हो गए और उनकी औरतें कुतियों से बढ़ गईं।"

—नज्मुल हुदा, पृ० 10, ले० : मिर्ज़ा गुलाम अहमद क़ादियानी, प्रकाशित सन् 1908 ई०

मिर्ज़ा गुलाम अहमद क़ादियानी के उपरोक्त बयानों के आधार पर मानो कि (अल्लाह की पनाह) तमाम मुसलमान जो मिर्ज़ा गुलाम अहमद के हक़ होने की गवाही न दें, वह जहन्नमी और हरामज़ादे, जंगल के सुअर और रंडियों की औलाद हैं और मुसलमान औरतें हरामज़ादियाँ, रंडियाँ (वैश्याएँ) और जंगल की कुतियाँ और जहन्नमी हैं।

पाठक ख़ुद ग़ौर करें! यह है वह भाषा और वर्णनशैली जो मिर्ज़ा गुलाम अहमद क़ादियानी अपने विरोधियों और क़ादियानियत के इनकारियों के बारे में इस्तेमाल करते हैं। मानव इतिहास गवाह है कि किसी नबी, वली, ऋषी, मुनि या महापुरुषों ने ऐसी गन्दी ज़बान कभी इस्तेमाल नहीं की। ख़ुदारसीदा बुज़ुर्गों का तो क्या ज़िक्र, एक आम सज्जन व्यक्ति भी इस शैली की भाषा लेखन व भाषण में इस्तेमाल नहीं करता। अलबत्ता ग़ैर ज़िम्मेदार व लापरवाह लोगों के बारे में क्या कहा जा सकता है। सोचिए तो सही, इस प्रकार के अश्लील वाक्य बोलनेवाला व्यक्ति क्या नबी हो सकता है? नबी होना तो दूर की बात उसकी गिनती तो सज्जन व्यक्तियों में भी नहीं की जानी चाहिए।

ग़ैर मिर्ज़ाई के पीछे नमाज़ जाइज़ नहीं

मिर्ज़ा गुलाम अहमद क़ादियानी साहब ने सख़्ती से ताकीद की—

"अहमदी को ग़ैर अहमदी के पीछे नमाज़ न पढ़नी चाहिए।"

—अनवारे ख़िलाफ़त, पृ० 89, मिर्ज़ा महमूद

ग़ैर मिर्ज़ाई की जनाज़े की नमाज़ पढ़नी और उससे रिश्तेदारी का निषेध

मिर्ज़ा गुलाम अहमद अपने अनुयायियों को ताकीद करते हैं—

"ग़ैर अहमदी की नमाज़े जनाज़ा न पढ़ो और ग़ैर अहमदी रिश्तेदारों को रिश्ता न दो।"

—अल-फ़ज़्ल, 14 अप्रैल, सन् 1908 ई०

एक साहब ने सवाल किया कि ग़ैर अहमदी बच्चे का जनाज़ा क्यों न पढ़ा जाए, जबकि वह मासूम होता है। इसपर मिर्ज़ा गुलाम अहमद क़ादियानी ने कहा—

"जिस प्रकार ईसाई बच्चों का जनाज़ा नहीं पढ़ा जा सकता, यद्यपि मासूम (अबोध) ही होता है। उसी तरह एक ग़ैर अहमदी के बच्चे का जनाज़ा भी नहीं पढ़ा जा सकता।"

—डॉ० मिर्ज़ा महमूद अहमद, अल-फ़ज़्ल, 23 अक्तूबर, सन् 1922 ई०

मानो कि मिर्ज़ाइयों के नज़दीक तमाम मुसलमान काफ़िर हैं!

दुआ मत करो

सवाल : क्या किसी ऐसे व्यक्ति की मृत्यु पर जो अहमदिया सिलसिला में शामिल नहीं, यह कहना जाइज़ है कि ख़ुदा मरहूम को जन्नत नसीब करे?

जवाब : ग़ैर अहमदियों का कुफ़्र रौशन दलील से साबित है और काफ़िरों के लिए मग़फ़िरत की दुआ जाइज़ नहीं।

—अल-फ़ज़्ल, 7 फ़रवरी, सन् 1921 ई०, भाग-8, पृ० 59

पूरी तरह बाइकाट

"ग़ैर अहमदियों से हमारी नमाज़ अलग की गई। उनको लड़कियाँ देना हराम किया गया। उनके जनाज़े पढ़ने से रोका गया। अब शेष क्या रह गया जो हम उनके साथ मिलकर रह सकते हैं। दो प्रकार के संबंध होते हैं—एक धार्मिक, दूसरा सांसारिक। धार्मिक (दीनी) संबंध का सबसे बड़ा ज़रीया इबादत का इकट्ठा होना है और सांसारिक संबंध का भारी ज़रीया रिश्ता-नाता है। और ये दोनों हमारे लिए हराम ठहरा दिए गए। अगर कहो कि हमको उनकी लड़कियाँ लेने की इजाज़त है तो मैं कहता हूँ ईसाई की भी लड़कियाँ लेने की इजाज़त है।"

—कलिमतुल फ़स्ल, पृ० 169, ले० : मिर्ज़ा बशीर अहमद पुत्र मिर्ज़ा गुलाम अहमद

मुसलमानों और क़ादियानियों की जंत्री (क़ादियानियों का कलेंडर) भी अलग है। मुसलमानों का साल मुहर्रम से शुरू होता है और क़ादियानियों का 'सुलह' से। मुसलमानों के साल के महीने—मुहर्रम, सफ़र, रबीउल अव्वल, रबीउस्सानी, जमादुल अव्वल, जमादुस्सानी, रजब, शाबान, रमज़ान, शव्वाल, ज़ीक़ादा, ज़िलहिज्ज हैं। क़ादियानियों के महीनों के नाम अहमदिया कलेंडर में इस प्रकार अंकित किए जाते हैं—सुलह, तबलीग़ अमान, शहादत, हिजरत, अहसान, वफ़ा, ज़ुहूर, तबूक, अख़ा, नुबूवत, फ़तह।

यह इस बात की खुली निशानी है कि क़ादियानी अलग समुदाय और मुसलिम समुदाय एक अलग समुदाय है, जिनमें बुनियादी तौर पर ख़त्मे नुबूवत (नुबूवत के ख़त्म होने) और फिर अन्य बातों में पग-पग पर विभेद पाया जाता है।

मिर्ज़ा साहब और बैतुल्लाह (काबा) का हज

मिर्ज़ा साहब ज़िन्दगी-भर हज न कर सके जिसके लिए हर मुसलमान अल्लाह से दुआएँ करता है कि ऐ परवरदिगार! तू हमें अपने घर की ज़ियारत (दर्शन) नसीब फ़रमा। जब लोगों ने मौलाना मुहम्मद हुसैन बटालवी के हज करने का ज़िक्र किया तो मिर्ज़ा साहब ने जवाब दिया—

"मेरा पहला काम ख़िंज़ीरों (सुअरों) का क़त्ल करना और सलीब की पराजय है। अभी तो मैं ख़िंज़ीरों को क़त्ल कर रहा हूँ।"

—मल्फ़ूज़ाते अहमदिया पंजुम, पृ० 363, 364

मिर्ज़ा साहब अच्छी तरह जानते थे कि मुसैलमा कज़्ज़ाब का क्या अंजाम हुआ जिसने नुबूवत का झूठा दावा किया था। मुसैलमा कज़्ज़ाब और उनके साथियों को पहले ख़लीफ़ा हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ और सहाबा (रज़ि०) ने क़त्ल करके जहन्नम पहुँचा दिया। क्या मिर्ज़ा साहब को इस बात की ख़बर नहीं थी कि नुबूवत के दावेदार का अंजाम हिजाज़[1] की धरती पर क्या होता है? अतः मुसैलमा कज़्ज़ाब जैसी दुर्गति होगी। इसी लिए बैतुल्लाह (ख़ान-ए-काबा) की ज़ियारत से महरूम रहे, जो इस्लामी इबादत का लाज़िमी और अहम अंग है।

फिर अल्लाह तआला ने मिर्ज़ा गुलाम अहमद क़ादियानी को हज जैसी बड़ी इबादत से महरूम करके इमाम मेहदी और ईसा मसीह होने के उन तमाम दावों को मिट्टी में मिला दिया, क्योंकि इमाम मेहदी मक्का मुकर्रमा में पैदा होंगे, उनका नाम मुहम्मद होगा और माँ का नाम आमिना और वालिद मुहतरम का नाम अब्दुल्लाह होगा। वे हज्रे अस्वद (काला पत्थर) और मक़ामे इबराहीम के बीच बैअत लेंगे। इसी प्रकार हज़रत ईसा (अलै०) दमिश्क़ के पूर्वीय मिनारे पर दो फ़रिश्तों के सहारे नाज़िल होंगे और रसूलों के सरदार और नुबूवत के समापक हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की पवित्र क़ब्र के निकट दफ़न होंगे।

अब यह बात तो मिर्ज़ा गुलाम अहमद क़ादियानी साहब के माननेवाले ही बताएँगे कि उनके नबी ने कितने सुअर क़त्ल किए और कितनी सलीबें तोड़ीं।

1. अरब का वह इलाक़ा जिसमें मक्का, मदीना और ताइफ़ शामिल हैं।

मिर्ज़ा जी और अल्लाह की राह में जिहाद

अल्लाह की राह में जिहाद एक अत्यंत महत्वपूर्ण कर्म है जिसको मंसूख़ (रद्द) कराने के लिए क़ादियानी नुबूवत व रिसालत की बुनियाद रखी गई, वरना 'दीन' (धर्म) की पूर्णता के बाद अब किसी नबी और रसूल की आवश्यकता ही बाक़ी नहीं रह गई थी और मानव-जीवन का कौन-सा भाग बाक़ी रह गया था जिसकी ओर रसूले अकरम ख़ातमुन्नबीयीन हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने मार्गदर्शन न किया हो। और न ही 'दीन' में कोई ऐसी कठिन बात पाई जा रही थी जिसका मंसूख़ किया जाना ज़रूरी था। क़ादियानियत के सारे ताने-बाने जिहाद को मंसूख़ कराने के लिए बुने गए। अंग्रेज़ जब हिन्दुस्तान में आए तो उनकी हुकूमत के स्थायित्व के लिए ज़रूरी था कि यहाँ की जनता उनकी पैरवी को वफ़ादारी के साथ स्वीकार कर लेती लेकिन उनको इस सिलसिले में कामयाबी नज़र नहीं आ रही थी। इसके लिए ज़रूरी था कि वे मुसलमानों के दिल से जिहाद के जज़्बे के महत्व को ख़त्म कर दें और यह काम एक ऐसा व्यक्ति ही कर सकता था जिसको मुसलमानों का बड़ी हद तक एतिमाद हासिल होता।

भारत में सैयद अहमद शहीद व मौलाना इसमाईल शहीद और उनके जानिसार साथी जिनके दिल जिहाद से सरशार (उन्मत्त) थे, इस्लाम की रक्षा व स्थायित्व के लिए सिर से पैर तक मुजाहिद (जिहाद करनेवाले) नज़र आते थे। लोग हज़ारों की संख्या में उनके चारों ओर जमा होने लगे। उनकी कोशिशों से मुसलमानों के अंदर अल्लाह की राह में जिहाद की भावना भड़क उठी और वे हर तरह की क़ुरबानी देने के लिए तैयार हो गए। इस सूरतेहाल में अंग्रेज़ों के अंदर बेचैनी का पैदा होना एक स्वाभाविक बात थी। ऐसी ही एक तहरीक (आन्दोलन) सूडान में शेख़ अहमद सूडानी लेकर उठे जिससे सूडान में अंग्रेज़ों का प्रमुत्व डगमगाने लगा। फिर अल्लामा जमालुद्दीन अफ़ग़ानी की तहरीक "इत्तिहादे इस्लामी" (इस्लामी एकता) अंग्रेज़ों के लिए कम बेचैनी का कारण न थी। इन सारे कारनामों का जाइज़ा लेने के बाद अंग्रेज़ इस नतीज़े पर पहुँचे कि मुसलमानों की भावनाओं पर क़ाबू पाने के लिए ज़रूरी है कि मज़हबी तौर पर उनको हुकूमत की वफ़ादारी पर आमादा किया जाए, ताकि इसके बाद उनको मुसलमानों की ओर से

ख़तरा बाक़ी न रहे और वे इतमीनान से हुकूमत कर सकें। इस सेवा के लिए अंग्रेज़ों ने मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी को सबसे ज़्यादा उचित और लाभदायक व्यक्ति पाया। अतः उन्होंने मिर्ज़ा जी को चुन लिया।

मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद साहब एक मानसिक रोगी थे, जैसे—पागलपन, चित्त-विक्षिप्त आदि। आपके दिल में यह लहर उठी थी कि वे दुनिया की एक महान् शख़्सियत के रूप में उभरें। दुनिया के अन्दर उनके माननेवालों की संख्या बहुत ज़्यादा हो। उनको वही स्थान प्राप्त हो जो इस्लाम के आख़िरी पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) को प्राप्त है। अपने झूठे अभिमान को प्राप्त करने के लिए उन्होंने अपने आपको इस्लाम का विद्वान (आलिमे दीन), फिर धर्म-सुधारक (मुजद्दिदे दीन) का दर्जा देने की कोशिश की। फिर इमाम मेहदी बनने, इसके बाद मसीह के सदृश, फिर मसीह मौऊद और अंत में बाक़ायदा नबी बन बैठे।

अंग्रेज़ों की राह में चूँकि जिहाद व इत्तिहादे इस्लामी (अल्लाह की राह में जान तोड़ संघर्ष और इस्लामी एकता) और इस रास्ते में जान व माल की क़ुरबानी की भावना सबसे बड़ी रुकावटें थीं, इसलिए अंग्रेज़ यही चाहते थे कि एक व्यक्ति उनका समर्थक व हामी और मददगार हो जो उनके रास्ते की सारी रुकावटें साफ़ करे। मिर्ज़ा क़ादियानी ने बड़ी महारत के साथ अंग्रेज़ों की इसा मनोकामना को पूरा करने की कोशिश की। अपनी कोशिशों का ज़िक्र मिर्ज़ा साहब इन शब्दों में करते हैं—

"मेरी उम्र का ज़्यादा हिस्सा इस अंग्रेज़ी सल्तनत (साम्राज्य) के समर्थन और हिमायत में गुज़रा है और जिहाद से रोकना और अंग्रेज़ों की पैरवी करने के बारे में इतनी किताबें लिखी हैं और इश्तेहार प्रकाशित किए हैं कि यदि वे पत्रिकाएँ और किताबें इकट्ठी की जाएँ तो पचास अलमारियाँ उनसे भर सकती थीं। मैंने ऐसी किताबों को अरब, मिस्र, शाम, काबुल और रूम देश तक पहुँचा दिया।"

—तिर्याक़ुल क़ुलूब, पृ० 15, मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी

स्पष्टीकरण

"यह अनुरोध है कि सरकार अन्नदाता ऐसे ख़ानदान के बारे में जिसको पचास साल के लगातार तजुर्बे से एक वफ़ादार, जानिसार ख़ानदान साबित कर चुकी है और जिसके संबंध में माननीय सरकार के प्रतिष्ठित अधिकारियों ने हमेशा मज़बूत राय से चिट्ठियों में यह गवाही दी है कि वह शुरू से अंग्रेज़ी सरकार का ख़ैरख़्वाह और सेवक है। इस स्वयं अपने हाथ से लगाए हुए पौधे

के बारे में अत्यंत सावधानी व चौकसी और खोजबीन व तवज्जोह से काम ले और अधीन हाकिमों को निर्देश दे कि वे भी इस खानदान की प्रमाणित वफ़ादारी और निष्ठा का लिहाज़ रखकर मुझे और मेरी जमाअत को कृपा और दया की दृष्टि से देखें।"

—तबलीग़े रिसालत, भाग-7, पृ० 20

एक दूसरी जगह लिखते हैं—

"मैं आरंभिक उम्र से इस वक़्त तक लगभग साठ वर्ष की उम्र तक पहुँचा हूँ। अपनी ज़बान और क़लम से इस महत्वपूर्ण काम में व्यस्त हूँ ताकि मुसलमानों के दिलों को अंग्रेज़ी सरकार की सच्ची मुहब्बत और ख़ैरख़्वाही और हमदर्दी की ओर फेर दूँ और उनके कुछ नासमझों के दिलों से ग़लत जिहाद आदि को दूर कर दूँ जो उनकी दिली सफ़ाई और निष्ठापूर्ण संबंध से रोकते हैं।

—ज़मीमा शहादतुल क़ुरआन और मिर्ज़ा, संस्करण-6, प्रकाशित सन् 1893 ई०; तबलीग़े रिसालत, भाग-7, पृ० 10; मजमूआ इश्तेहरात, पृ० 11, भाग-3

यह है उस व्यक्ति का चरित्र जो सलीब तोड़ने का दावा करता है और सलीब बरदारों की ग़ुलामी में मरा जाता है।

अंतिम बात

इस्लाम का बुनियादी अक़ीदा है कि जनाब नबी करीम हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) रहती दुनिया तक के लिए अल्लाह के अंतिम नबी व रसूल हैं और जिन्नों व इनसानों के लिए पूर्ण सुचरित्र और अमली नमूना हैं। अल्लाह की ओर से जो 'दीन' आप (सल्ल०) लेकर आए हैं वह तमाम ज़मानों और देशों में बसनेवाले सभी इनसानों और जिन्नों के लिए काफ़ी है। अब मानव-जीवन का कोई भी मसला ऐसा बाक़ी नहीं रहा जिसका हल नबी करीम ख़ातमुल अम्बिया हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने न बता दिया हो। आप (सल्ल०) पर अवतरित होनेवाली अल्लाह की आख़िरी किताब क़ुरआन मजीद किसी भी फेर-बदल व परिवर्तन से सुरक्षित कर दी गई और इसकी सुरक्षा भी अल्लाह ने स्वयं अपने ज़िम्मे ली है।—"इन्ना नहनू नज़्ज़ल-नज़ ज़िक-र व इन्ना लहू ल हाफ़िज़ून" [हमने ही इस ज़िक्र (क़ुरआन मजीद) को अवतरित किया है और हम ही इसके रक्षक भी हैं।]

—क़ुरआन, 15 : 9

इसी लिए क़ुरआन मजीद आज भी अपनी उसी शक्ल में मौजूद है जिस शक्ल में अवतरित किया गया और उसी प्रकार हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) का पवित्र जीवन-चरित्र यानी आपके वचन, आचरण और हालात तथा आप (सल्ल०) का स्वभाव व आदतें, आपका उठना-बैठना, आपका लेन-देन व इबादतें, आपकी घरेलू ज़िन्दगी हमारे सामने पूरी तरह मौजूद व सुरक्षित है। यह विशेषता आप (सल्ल०) से पहले के नबियों को हासिल नहीं थी। इसी लिए निरंतर रसूल आते रहे। मगर जनाब नबी करीम (सल्ल०) के आ जाने के बाद नुबूवत का क्रम ख़त्म हो गया। चूँकि अब संसार में बसनेवाले सभी इनसानों के लिए क़ियामत तक एक ही जीवन-विधान मौजूद है, जिसकी सच्चाई पर जनाब नबी करीम (सल्ल०) का पवित्र जीवन गवाह है, अतः आप (सल्ल०) के बाद न किसी नबी व रसूल के आने की ज़रूरत है और न गुंजाइश।

इस्लाम दुनिया में अनेक परीक्षाओं से गुज़रा है। उसके ख़िलाफ़ बड़ी संगीन साज़िशें की गईं और की जाती रही हैं। आज के दौर में इस्लाम के ख़िलाफ़ नई नुबूवत का फ़ितना, एक बहुत बड़ी साज़िश का नतीजा है जिसके लिए मुसलिम समुदाय को सुसंगठित और एकमत होकर गंभीरता से सोच-विचार करने की ज़रूरत है।

झूठे नबियों का फ़र्ज़ी नुबूवत का दावा करने का सिलसिला तो यहूदियों व ईसाइयों में भी जारी था, मगर हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की उम्मत में तो आप (सल्ल०) के जीवनकाल से ही जारी है, जिसकी पहली मिसाल मुसैलमा कज़्ज़ाब है, जिसने नबी करीम (सल्ल०) से अनुरोध किया था कि आप (सल्ल०) की ज़िन्दगी में आप (सल्ल०) की नुबूवत हम क़बूल करते हैं, लेकिन आप (सल्ल०) के बाद यह नुबूवत हमारे सुपुर्द कर दी जाए। उस वक़्त नबी करीम (सल्ल०) के पवित्र हाथ में एक छड़ी थी। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "(नुबूवत व ख़िलाफ़त का तो सवाल ही पैदा नहीं होता) अगर तू मुझसे यह छड़ी भी माँगेगा तो भी तुझे न दूँगा।"

आज के दौर में मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी का नुबूवत का दावा मुसलिम समुदाय के लिए एक बहुत बड़ा फ़ितना और बहुत बड़ा चैलेंज है, जिसकी रोक अत्यंत आवश्यक है। इस फ़ितने के मुक़ाबिले के लिए हमारे पूर्वज व बुज़ुर्गों ने बड़ी-बड़ी क़ुरबानियाँ पेश की हैं। (अल्लाह उनकी क़ब्रों को नूर से भर दे।) इसलिए हमें भी अपने बड़ों की पैरवी करते हुए राँगा पिलाई नींव बनकर इस बड़ी बला का मुक़ाबिला करने की ज़रूरत है।

क़ादियानी जो अपने आपको अहमदी मुसलमान कहते हैं और मुसलमानों को बताते हैं कि हमारा कलिमा, नमाज़, क़ुरआन मजीद वही है जो दूसरे मुसलमानों का है, मगर वे अपने असल इरादों को दिलों में छिपाए रखते हैं। उनके नज़दीक कलम-ए-तय्यब के अर्थ में यह बात शामिल है कि अल्लाह के रसूल हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के साथ मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी साहब को भी ख़ुदा का नबी व रसूल स्वीकार किया जाए। उन्होंने क़ुरआन मजीद का शाब्दिक और भाविक परिवर्तन करने का दुस्साहस कर डाला। उन्होंने मुसलमानों के सर्वमान्य अक़ीदा—ख़त्मे नुबूवत (नुबूवत का समापन) की बुनियादों पर कुल्हाड़ी चलाकर इस्लाम की मज़बूत इमारत को ध्वस्त करने की नापाक कोशिश की। वे चाहते हैं कि जनाब नबी करीम (सल्ल०) का पवित्र नाम तो बाक़ी रहे और मुसलमान आप पर भी उसी तरह ईमान रखें जिस तरह पहले के नबी हज़रत इबराहीम (अलै०), हज़रत मूसा (अलै०) और हज़रत ईसा (अलै०) पर रखते हैं, लेकिन उनके लिए पूर्ण आदर्श-चरित्र मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी हों और वे सारी मुहब्बतें, अक़ीदतें (श्रद्धाएँ), वफ़ादारियाँ और जाँनिसारियाँ जो हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के साथ ख़ास हैं वह मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद साहब से संबद्ध हो जाएँ और मुहम्मद (सल्ल०) की नुबूवत व रिसालत की मज़बूत इमारत ध्वस्त होकर रह जाए।

क़ादियानियत एक स्थाई धर्म और क़ादियानी एक अलग सम्प्रदाय है, जिनका इस्लाम से कोई संबंध नहीं। हर समझदार व्यक्ति इस बात से सहमत होगा कि समाज में हर किसी व्यक्ति या गिरोह को यह अधिकार प्राप्त है कि जिस धर्म को चाहे वह अपनाए और जहाँ तक संभव हो उसके प्रचार-प्रसार के लिए काम करे, लेकिन किसी ऐसे गिरोह को जो स्वयं को मुसलमान कहे हरगिज़ इजाज़त नहीं दी जा सकती कि अपनी बातों और कामों के द्वारा इस्लाम के बुनियादी अक़ीदों को विकृत करने की कोशिश करे और अगर ये लोग या समुदाय इस्लाम के बुनियादी अक़ीदों को स्वीकार नहीं करते तो बेहतर है कि वह इस्लाम के दायरे से निकल जाने का एलान करके जिस धर्म व पंथ को चाहें अपना ले या कोई नया धर्म बना लें। जो व्यक्ति अल्लाह के नबी हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) को आख़िरी नबी स्वीकार नहीं करता तो हमें इस बात से कोई ग़रज़ नहीं कि वह एक छोड़ दस नबियों की नुबूवत पर ईमान रखे। हम मुसलमानों को इससे क्या वास्ता।

जिस प्रकार कोई भी मुसलमान मसजिदे नबवी (मदीना स्थित) के ध्वस्त किए जाने को बर्दाश्त नहीं कर सकता, उसी प्रकार यह बात उसके ईमान के बिलकुल ख़िलाफ़ है कि वह यह बरदाश्त कर ले कि उसके सामने इस्लाम का नाम लेकर इस्लाम की जड़ें काटने की कोशिश की जाए और इस्लाम के मज़बूत क़िला 'ख़तमे नुबूवत के अक़ीदे' को ध्वस्त करके उसकी जगह नई इमारत तामीर करने का दुस्साहस किया जाए।

"ऐ अल्लाह! हमें सही मानो में हक़ को हक़ समझने की तौफ़ीक़ दे और हमें बातिल को बातिल समझने की तौफ़ीक़ दे और उससे बचने की ताक़त दे।"